बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 111

जीएसटी के सात वर्ष

देश की अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था में आमूलचूल बदलाव हुए सात वर्ष बीत चुके हैं। इस बदलाव के तहत ही वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी प्रणाली लागू की गई थी। जीएसटी के अंतिम स्वरूप के बारे में बहुत कुछ ऐसा था जो एक तरह का समझौता था। इसमें केंद्र सरकार और संदेह करने वाले राज्यों के बीच का समझौता भी शामिल था। उस समय माना जा रहा था कि ये समझौते जीएसटी के सुधारों को सीमित करेंगे। इस समाचार पत्र समेत कई लोगों को उम्मीद थी कि समय के साथ जीएसटी के भीतर की ढांचागत दिक्कतें दूर कर दी जाएंगी और इसका पूरा लाभ मिलना शुरू हो जाएगा। परंतु सात वर्ष और दो आम चुनाव बीतने के बाद भी यह स्पष्ट है कि व्यवस्था में बुनियादी सुधार के लिए और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

जीएसटी की निगरानी जीएसटी परिषद करती है। यह राज्यों और केंद्र सरकार के वित्त मंत्रालयों को एक साथ लाती है। बीते सप्ताहांत परिषद की बैठक हुई लेकिन इस बार भी जीएसटी में अहम सुधारों के गहरे प्रश्न आगे की बैठकों के लिए टल गए। कहने का अर्थ यह नहीं है कि परिषद ने अहम काम नहीं किए। केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने संकेत दिया कि जीएसटी परिषद द्वारा लिए गए निर्णयों में मांग नोटिस को चुनौती देने के तरीके और अपील में बदलाव तथा अनुपालन व्यवस्था में अन्य सुधार शामिल हैं। उदाहरण के लिए अगर किन्हीं मामलों में धोखाधड़ी नहीं हुई है तो उनमें ब्याज या जुर्माना नहीं मांगा जाएगा और विभाग अपने विरुद्ध निर्णयों के खिलाफ स्वतः ऊपरी अदालतों में अपील नहीं करेगा। बल्कि वे संशोधित मौद्रिक सीमा के अधीन होंगे। चूंकि दो फीसदी आकलनों को चुनौती दी जा रही है इसलिए ऐसे बदलाव बहुत अधिक महत्त्व रखते हैं। जीएसटी को लेकर एक वादा यह था कि इसका इस्तेमाल सुगम होगा। परंतु ऐसा अपेक्षित स्तर पर नहीं हुआ है।

अब वक्त आ गया है कि जीएसटी के बुनियादी ढांचे में सुधार करने का प्रयास किया जाए। यह सवाल उठाया जाना चाहिए कि राज्य और केंद्र सरकार के स्तर पर दोहरा ढांचा क्यों होना चाहिए? जीएसटी के अधूरे एजेंडे में दरों और स्लैब को युक्तिसंगत बनाया जाना भी शामिल है। अप्रत्यक्ष कर व्यवस्था की प्रारंभिक परिकल्पना एक दर के साथ की गई थी। जिससे स्पष्टता और किफायत सुनिश्चित होती। परंतु इसकी जगह कई दरें पेश की गईं और जीएसटी परिषद भी इन दरों में लोकलुभावन ढंग से बदलाव करने का मोह नहीं त्याग पाई। यहां तक कि पिछली बैठक में भी बॉक्स पैक करने पर लगने वाली दर को 18 फीसदी से कम करके 12 फीसदी कर दिया गया। ऐसे बदलावों के बाद इस प्रकार और मांग सामने आने की आशंका बढ़ जाती है और परिषद का समय भी बरबाद होता है। बहरहाल, परिषद ने वादा किया था कि पेट्रोल और डीजल को जीएसटी व्यवस्था में लाने के विषय में चर्चा की जाएगी। अल्कोहल की तरह इन पर भी फिलहाल राज्यों द्वारा कर लगाया जाता है। व्यवस्था के भीतर लागत और अक्षमता की एक बड़ी वजह यह भी है। उन्हें जीएसटी के दायरे में लाना बहुत लंबे समय से लंबित है।

इससे भी बड़ा प्रश्न यह है कि जीएसटी क्षतिपूर्ति उपकर अधिशेष का क्या होगा जिसकी राशि 70,000 करोड़ रुपये तक हो सकती है। यह उपकर तंबाकू, महंगे वाहनों आदि पर लगाया जाता है। इस उपकर को लगाने की एक आंशिक वह वह भी थी कि महामारी के दौरान राज्यों की ओर से लिए गए ऋण को चुकाने में इसका इस्तेमाल किया जाए। परंतु लग रहा है कि काफी अधिक राशि बची रह जाएगी। इसके उपयोग को लेकर चर्चा टलती रही है। इसके इस्तेमाल को लेकर बहस होना स्वाभाविक है लेकिन इसके चलते जीएसटी सुधार से जुड़े अहम प्रश्नों को हल करने में देरी नहीं होनी चाहिए।

आर्थिक नफा-नुकसान न हो लोक नीतियों का आधार

जलवायु परिवर्तन और समाज में युवा एवं बुजुर्गों की आबादी में असंतुलन दो बड़ी समस्याएं बन कर उभरी हैं। विस्तार से बता रहे हैं अरुण मायरा

आधुनिक अर्थशास्त्र मानव मूल्यों और आर्थिक मूल्यांकन के बीच प्रतिस्पर्द्धी बनकर रह गया है। यह स्थिति दो वैचारिक समस्याओं के कारण उत्पन्न हुई है। इनमें एक है उपयोगितावादी सिद्धांत और दूसरा है मानव जीवन का आकलन करने वाली असंभवता। आर्थिक लागत-लाभ मूल्यांकन ने मानव मूल्यों को दूषित कर दिया है और यह लोक नीतियों एवं कानूनी प्रक्रियाओं में गुणात्मक गिरावट का कारण रहा है।

उपयोगितावादी सिद्धांत के अनुसार एक अच्छी नीति अधिकतम लोगों के लिए लाभकारी होती है, मगर कुछ लोगों के लिए यह नुकसान का कारण भी बनती है। उपयोगितावादी नीतियां राजनीतिक रूप से लोकप्रिय होती हैं क्योंकि अधिकांश लोग इन्हें पसंद करते हैं।

उपयोगितावादी सिद्धांत वंचित लोगों के अधिकारों की रक्षा नहीं करती हैं और ऐसे लोगों की आवश्यकताएं आर्थिक वृद्धि के नाम पर कुचल दी जाती हैं। राजनीतिक एवं आर्थिक बहुसंख्यवाद स्वाभाविक साझेदार होते हैं। ज्यादातर लोग इस बात पर राजी हो गए कि जो लोग आर्थिक विकास की प्रक्रिया में पीछे छूट गए हैं उनकी आवश्यकताओं पर बहुत अधिक ध्यान नहीं दिया जाए तो कोई हर्ज नहीं।

बहुसंख्यकवाद सिद्धांत चुनावी राजनीति के लिए अच्छा हो सकता है परंतु, यह लोकतंत्र का दायरा सीमित कर देता है। बहुसंख्य लोकतंत्र में न केवल बहुसंख्यक संपन्न रहते हैं बल्कि उन्हें यह भी समझा दिया जाता है कि वे स्वाभाविक रूप से भी बेहतर व्यक्ति होते हैं।

समाज में विभिन्न समुदायों को हुए कुल लाभ की गणना और नुकसान की थाह लेने के लिए नफा एवं नुकसान का सही आंकड़ा अनिवार्य रूप से होना चाहिए। बिन्यामिन एपेलबाम ने 'द इकनॉमिस्ट्स आवरः हाऊ द फॉल्स प्रोफेट्स ऑफ फ्री मार्केट्स फ्रैक्चर्ड आवर' सोसाइटी में लिखा है कि लागत-लाभ विश्लेषण के इस्तेमाल ने पिछली शताब्दी में अर्थशास्त्रियों को नीति निर्धारण की जगह पर विराजमान कर दिया।

अर्थशास्त्री राजनीतिक नेताओं को नियमन के प्रभाव का मूल्यांकन करने और तार्किक निर्णय लेने में लागत-लाभ का विश्लेषण करने के लिए तैयार करने में सफल रहे। 1960 के दशक में अमेरिकी सरकार ने वियतनाम युद्ध में बरबाद हुए जीवन के मूल्यों के आगे अपनी शस्त्र प्रणाली की लागत का आकलन किया। वर्ष 1971 में अमेरिकी राष्ट्रपति ने सरकार को पर्यावरण सुरक्षा से संबंधित आर्थिक लागत एवं लाभों का जायजा लेने के लिए कहा।

अर्थशास्त्र में सभी मात्राओं को अनिवार्य रूप से मौद्रिक मूल्य में परिवर्तित किया जाना चाहिए ताकि वे एक ही समीकरण में फिट बैठ जाएं। अर्थशास्त्र में सभी मानव समान महत्त्व के नहीं होते हैं। जो लोग अधिक आय अर्जित करते हैं और अधिक उपभोग करते हैं और अंततः आर्थिक वृद्धि में अधिक योगदान देते हैं वे अधिक मूल्यवान माने जाते हैं।

जब अमेरिका में एक न्यायालय ने वर्ष 1984 में भोपाल गैस त्रासदी में जान गंवाने वाले 15,000 लोगों के लिए मुआवजा राशि तय की तो उसने कहा कि भारतीय लोगों के जीवन का महत्त्व अमेरिकी लोगों के जीवन के महत्त्व का महज एक हिस्सा है क्योंकि वहां लोग बहुत कम कमाते हैं।

बुजुर्ग लोग युवाओं की तुलना में आर्थिक रूप से कम उत्पादक माने जाते हैं क्योंकि उनके जीवनकाल की बची शेष अवधि कम होती है। ऐसे लोगों का महत्त्व युवा लोगों की तुलना में कम होता है क्योंकि युवा अधिक लंबे समय तक अर्थव्यवस्था में योगदान दे पाते हैं। आर्थिक हालात में सुधार और चिकित्सा विज्ञान में प्रगति और जन्म दर में गिरावट से पूरी दुनिया में जीवन प्रत्याशा बढ़ गई है।

कुछ युवा लोगों को अधिक बुजुर्ग लोगों का ख्याल रखना चाहिए। बुजुर्ग लोगों की उम्र बढ़ने के साथ ही उनके अधिक देखभाल की जरूरत पड़ती है और इसके लिए जरूरी आर्थिक संसाधनों का इंतजाम युवा करते हैं। बुजुर्ग लोगों को दीर्घ अवधि तक पेंशन देने के लिए सरकार को युवा लोगों पर अधिक कर लगाना पड़ता है। आर्थिक संदर्भ में बुजुर्ग लोग समाज पर बोझ समझे जाते हैं मगर इस पर विचार नहीं किया जाता कि ऐसे लोग समाज में कई ऐसे योगदान देते हैं जिन्हें रुपये-पैसे में नहीं तौला जा सकता।

भारत के उच्चतम न्यायालय ने हाल में घोषणा की थी कि मानव समाज को जलवायु परिवर्तन के खिलाफ सुरक्षा पाने का अधिकार है। न्यायालय ने विलुप्तप्राय प्रजाति के पक्षियों के अधिकारों से जुड़े एक मामले की सुनवाई के दौरान यह कहा था। यह मामला पर्यावरणविदों ने जलवायु परिवर्तन से बचाव के लिए अक्षय ऊर्जा ढांचा लगाने वाली कंपनियों के खिलाफ उठाया था।

पर्यावरण अपरदन एवं जलवायु परिवर्तन कई रूपों (वायु प्रदूषण, चरम तापमान, सूखा, बाढ़ आदि) में मनुष्य के जीवन को प्रभावित करते हैं। इसके कई कारण भी हैं। इनमें प्रमुख है आर्थिक विकास के लिए मानव द्वारा द्वारा प्रकृति का दोहन। उदाहरण के लिए खनन, औद्योगिक कृषि, और बड़े संयंत्र की स्थापना के क्रम में प्रकृति के साथ खिलवाड़ किया जाता है।

जब कारण एवं प्रभाव दोनों ही अनगिनत हैं तो जिम्मेदारी तय करना संभव नहीं हो पाता है। न ही लागत-लाभ की गणितीय रूप से गणना हो सकती है। उदाहरण के लिए पापुआ न्यू गिनी में किसी बुजुर्ग महिला के जीवन का मूल्य अमेरिका के कोलोराडो में एक धनी परिवार में पैदा हुए शिशु की तुलना में कितना महत्त्वपूर्ण है?

सरकारी कामकाज प्रणाली में शक्ति

कानून समानता की गारंटी नहीं दे सकता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 1948 में मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को आत्मसात किया था। संयुक्त राष्ट्र ने अंतरराष्ट्रीय न्यायालय की स्थापना की ताकि दुनिया के सभी देशों के लोगों को समान दर्जा मिल सके। इसके अलावा संयुक्त राष्ट्र के प्रस्ताव लागू कराने के लिए शक्तिशाली देशों की भागीदारी से सुरक्षा परिषद का भी गठन किया गया।

मगर संयुक्त राष्ट्र की स्थापना के 75 वर्ष बाद भी गाजा में निर्दोष बच्चे उन देशों के हथियारों से मारे जा रहे हैं जो दूसरे देशों की तुलना में स्वयं को अधिक संभ्रांत समझते हैं। संभवतः उन्होंने अपने उच्च तकनीक वाले लक्ष्य वेधन में 'अचूक' बमों के साथ आम लोगों की परिणामिक मौत का आर्थिक लागत-लाभ विश्लेषण किया है।

बाजार की मांग-आपूर्ति पर आधारित आर्थिक प्रणाली में विश्वास करने वाला कोई व्यक्ति की नजर में इन पेचीदा समस्याओं का समाधान यह है कि भविष्य को बाजार के हवाले कर दिया जाए। उनका कहना है कि सरकार एवं नियमन बाजार की सुंदरता एवं स्वतंत्रता की राह में आड़े आते हैं। मगर इस सुंदरता के पीछे शक्ति का कुरूप चेहरा नजर आता है। सरकारी तंत्र में बैठे शक्तिशाली संस्थाओं से शक्ति अंतरराष्ट्रीय स्तर पर और देश के भीतर शक्तिहीन लोगों तक पहुंचनी चाहिए। यह मानव की टिकाऊ प्रगति और दुनिया को अधिक उचित स्थान बनाने के लिए बेहद जरूरी है।

यह विचारधारा लोकतांत्रिक समाज के कामकाज पर हावी हो रही है कि लोगों द्वारा समाज का संचालन आर्थिक रूप से लाभकारी नहीं है। इस विचारधारा के अनुसार विशेषज्ञों द्वारा तैयार नीतियों के साथ बाजार की अधिकतम और सरकार की न्यूनतम भागीदारी होनी चाहिए।

जिनके पास शक्ति है वे ऐसा कानून बनाते हैं जो उनकी शक्ति बढ़ा देती है। वे ऐसे संस्थानों पर नियंत्रण रखते हैं जो कानून लागू करते हैं, यहां तक कि उनकी विचारधारा से सहमति रखने वाले न्यायालयों पर भी उनका नियंत्रण हो जाता है।

लोक नीतियों का आधार मानव मूल्य होना चाहिए, न कि आर्थिक नफा-नुकसान। सभी के लिए समानता (गोरा-काला, अमीर-गरीब, युवा-बुजुर्ग) की शर्त यह है कि प्रत्येक जीवन को समान महत्त्व और उचित समान दिया जाए। बुजुर्ग और गरीब लोगों की महत्ता अर्थशास्त्रियों के समीकरणों में केवल संख्या तक सिमट कर नहीं रह जानी चाहिए।

गरीब केवल एक बड़ी अर्थव्यवस्था नहीं चाहते हैं बल्कि एक उचित एवं पारदर्शी अर्थव्यवस्था भी चाहते हैं। वे समान अवसर चाहते हैं। उनकी आवाज अनिवार्य रूप से सुनी जानी चाहिए और उसे अर्थव्यवस्था एवं समाज के संचालन में समान आदर मिलना चाहिए।

(लेखक हेल्पएज इंटरनैशनल के चेयरमैन हैं)

देश में गठबंधन धर्म की वापसी

नीति नियम

मिहिर शर्मा

पिछले कुछ दिनों में जो कुछ हुआ उसका सबसे बड़ा हासिल यह है कि भारत में नीति निर्माण की प्रक्रिया दोबारा गठबंधन के दौर में वापसी कर चुकी है। अब तक राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) के अहम साझेदार मसलन एन चंद्रबाबू नायडू की तेलुगू देशम पार्टी (तेदेपा), नीतीश कुमार की जनता दल यूनाइटेड यानी जदयू ने मोटे तौर पर कोई खास मांग सामने नहीं रखी है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी अहम कैबिनेट मंत्रियों को दोबारा उन्हीं पदों पर नियुक्त कर संकेत दिया है कि वह पहले की तरह ही सरकार चलाएंगे। परंतु यह तय नहीं है कि यह दोस्ताना रिश्ता कितने दिन चलेगा?

गठबंधन साझेदारों को दिए गए मंत्रालयों पर नजर डालना दिलचस्प हो सकता है। तेदेपा को नागर विमानन मंत्रालय दिया गया है जो पहले भी गठबंधन साझेदारों को दिया जाता रहा है। दिलचस्प है कि रेल मंत्रालय जिसकी अक्सर मांग रहती है वह पुराने अफसरशाह और पिछले रेल मंत्री अश्विनी वैष्णव के पास ही है। साझेदार दलों को दिए गए अन्य मंत्रालय हैं- पंचायती राज मंत्रालय, मत्स्य और पशुपालन मंत्रालय, इस्पात और भारी उद्योग मंत्रालय, खाद्य प्रसंस्करण, सूक्ष्म और मझोले उपक्रम, कौशल विकास और पारंपरिक स्वास्थ्य सेवा आदि। दूसरी ओर इनमें से शायद ही कोई तत्काल नीति निर्माण से जुड़े मंत्रालयों में से कोई पाए। उन मंत्रालयों को भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नेताओं के पास ही रहने दिया गया है। इनमें से कुछ ग्रामीण और ग्राम-शहर पर ध्यान देने वाली हैं। उदाहरण के लिए खाद्य प्रसंस्करण का नाम लिया जा सकता है। अन्य मंत्रालयों वह बड़े कारोबारों के साथ करीबी रिश्ता है, मिसाल के तौर पर नागर विमानन और इस्पात। इनमें से कम से कम एक यानी कौशल विकास और उद्यमिता आने वाले समय में नीति निर्माण का एक बड़ा केंद्र होगी। यह मंत्रालय राष्ट्रीय लोक दल के मुखिया और जाट नेता जयंत चौधरी को दिया गया है। चौधरी की पार्टी के पास महज ढाई साल पहले तक केंद्र या राज्य के स्तर पर कोई निर्वाचित प्रतिनिधि तक नहीं था। यह एक तरह से धन्यवाद ज्ञापन है क्योंकि वह राष्ट्रीय राजधानी के आसपास के इलाकों में युवाओं में असंतोष को कम करने की क्षमता रखते हैं। अब उन्हें अहम जिम्मेदारी दी गई है। यह निश्चित नहीं है कि उन्हें यह मंत्रालय अन्य साझेदारों की तुलना में अधिक विश्वसनीय मानकर दिया गया है या फिर कौशल विकास इस सरकार की प्राथमिकता में नीचे है।

परंतु यह यह भय तो बना ही रहेगा कि गठबंधन के साझेदार अपनी जमीन बचाते हुए व्यापक सरकारी नीतियों को बाधित भी करेंगे। उदाहरण के लिए वित्त मंत्रालय और पर्यावरण मंत्रालय दोनों घरेलू कार्बन कीमतों को लेकर किसी समझौते पर पहुंच सकते हैं। क्या जनता दल सेक्युलर नेता तथा इस्पात और भारी उद्योग मंत्री एचडी कुमारस्वामी इसमें साथ देंगे? या फिर वह ऐसे किसी भी बदलाव को रोक देंगे जिसके बारे में उनके अफसरशाह उन्हें बताएं कि इससे निजी और सरकारी क्षेत्र की बड़ी इस्पात कंपनियों के मुनाफे और राजस्व में कमी आएगी।

कुमारस्वामी पहले ही सेमीकंडक्टर फैब्रिकेशन के लिए सरकार द्वारा तय की गई सब्सिडी के आकार पर सवाल उठाकर सुर्खियां बटोर चुके हैं। उन्होंने इसकी आलोचना करते हुए कहा कि गुजरात में सेमीकंडक्टर योजना की बदौलत आने वाले हर रोजगार की लागत करीब 3.2 करोड़ रुपये होगी। उत्पादन संबद्ध प्रोत्साहन योजनाओं में से भी कई अपेक्षित रोजगार नहीं तैयार कर सकीं। इसके बावजूद जैसा कि कुमारस्वामी ने भी बाद में माना योजना का उद्देश्य रोजगार तैयार करना नहीं बल्कि आपूर्ति श्रृंखला के कुछ महत्त्वपूर्ण घटकों का उत्पादन देश में करने की एक महंगी कोशिश है। बहरहाल उनकी आलोचना इस बात का प्रमाण है कि गठबंधन सरकार कैसे काम कर सकती हैं या उन्हें कैसे काम करना चाहिए। हमें यह सुने कितने वर्ष हो चुके जब सरकार के किसी मंत्री ने ठोस वजहों से सरकारी नीतियों की आलोचना की हो?

सरकार की पहलों पर खुले में होने वाली और बहसें भी बुरी नहीं होंगी। अगर आप पलटकर 2014 के बारे में सोचें तो इस बात को लेकर संतोष का भाव था कि करीब चौथाई सदी के बाद देश को पूर्ण बहुमत वाली सरकार मिली थी। ऐसा माना जाता था कि गठबंधन धर्म के कारण बहुत सारे सुधारों की राह रुक जाती थी। हर मंत्रालय में गतिरोध की स्थिति बनी हुई थी और प्रधानमंत्री कार्यालय भी इतना मजबूत नहीं होता था कि चीजों को अंजाम दे सके। निश्चित रूप से इन प्रक्रियाओं में बदलाव आया। प्रधानमंत्री कार्यालय भी मोदी के अधीन अधिक ताकतवर हुआ और मंत्रालयों के सचिव इतने अधिक सशक्त हुए कि वे सत्ता के केंद्र से सीधे बातचीत कर सके। परंतु वास्तव में विधानों की गुणवत्ता में न तो सुधार हुआ और न ही उनकी गति में तेजी आई। उदाहरण के लिए श्रम कानूनों को नए सिरे से तैयार करने में भी बहुत वक्त लगा लेकिन उनमें बहुत कम बदलाव किए गए। इसके बावजूद चारों नए श्रम कानूनों को अभी भी सही ढंग से पारित और क्रियान्वित होना है। भू अधिग्रहण जैसे विवादास्पद सुधारों के आसानी से पारित होने की उम्मीदें उस समय खत्म हो गईं जब प्रधानमंत्री ने स्वयं विपक्ष के दबाव में उनको वापस ले लिया।

इस बीच, प्रस्तावित विधेयकों मसलन नई आपराधिक संहिताओं की गुणवत्ता पर भी असर पड़ा क्योंकि इन पर सार्वजनिक रूप से, विभागों के बीच और कैबिनेट में भी उनकी उपयोगिता को लेकर पर्याप्त चर्चा नहीं की गई।

ऐसे में दूरदराज की एक संभावना यह है कि गठबंधन का यह नया दौर पिछले एक दशक से ज्यादा नहीं तो भी कम उत्पादक नहीं साबित होगा। राजग में भाजपा के बाद सबसे अधिक सदस्यों वाले साझेदार दल का नाम है नायडू का तेदेपा। सुधारों और वृद्धि के मामले में उसकी छवि एक अग्रगामी सोच वाले दल की है। जदयू के नीतीश कुमार की छवि सक्षम प्रशासक की है। इन दोनों को विशिष्ट राजकोषीय रियायतें देनी पड़ सकती हैं जिससे राजकोषीय समेकन का काम मुश्किल होगा। परंतु संभव है कि यह प्रगतिशील बदलावों की राह में रोड़ा न बने। यह भी ध्यान देने लायक है कि इस सरकार में भाजपा के आंकड़े लगभग उतने ही हैं जितने कि पीवी नरसिंह राव के नेतृत्व वाली सरकार में कांग्रेस के थे। 1991 में उसी सरकार ने सुधारों की प्रक्रिया शुरू की थी। पहले की तरह इस बार भी प्रधानमंत्री के कदमों के लिए असली चुनौती बाहरी नहीं आंतरिक होगी। ये गतिरोध राजनीतिक असर को लेकर उनके आकलन से ही उत्पन्न होते रहे हैं। शायद यह करीबी चुनाव नतीजा यह याद दिलाएगा कि ऐसे राजनीतिक परिणामों का हमेशा कुशलतापूर्वक प्रबंधन नहीं किया जा सकता है। अब वक्त आ गया है कि कुछ जोखिम उठाया जाए और सुधार किए जाएं। गठबंधन उनकी राह नहीं रोकेगा।

आपका पक्ष

एक साथ चुनाव : आर्थिक व मानवीय ऊर्जा की बचत

देश में सभी संवैधानिक प्रतिनिधि संस्थाओं के चुनाव एक साथ करने का निर्णय एक बड़ा राजनीतिक सुधार साबित होगा। पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में गठित समिति द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन के अलावा, देश की कई समितियों ने एक साथ चुनाव के विचार का समर्थन किया है। कार्मिक, लोक शिकायत, विधि एवं न्याय मामलों से जुड़ी संसद की स्थायी समिति ने 17 दिसंबर, 2015 को राज्य सभा में प्रस्तुत एक रिपोर्ट में सुझाया था कि सभी दलों को एक साथ चुनाव पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। विशेष रूप से आर्थिक विकास की गति को देखते हुए यह बहुत आवश्यक है। नीति आयोग के पत्र में भी यही कहा गया है। विधि आयोग ने अपनी रिपोर्ट में यह सुझाव दिया है कि जिन विधान सभाओं के चुनाव लोकसभा के छह महीने बाद होने हैं, उनके चुनाव भी लोक सभा के साथ ही करा लिए जाएं और भले ही परिणाम छह माह बाद उनके कार्यकाल की समाप्ति पर घोषित किए जाएं। वहीं, 21वें विधि आयोग की 2018 में आई रिपोर्ट में भी एक साथ चुनाव वाले विचार के पक्ष में मत व्यक्त किया गया था। एक साथ चुनाव के विरोधियों की दलील बेहद कमजोर लगती है कि ऐसा होने से राष्ट्रीय मुद्दे अधिक केंद्र में होंगे, जिसका फायदा किसी एक दल को मिल सकता है।

सुधीर कुमार सोमानी, देवास

एक देश एक चुनाव के लिए पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में समिति गठित की गई थी

व्यवस्थागत सुधार जरूरी

व्यवस्थागत सुधार के बिना प्रवेश एवं प्रतियोगी परीक्षाओं में गड़बड़ी को रोक पाना असंभव सा प्रतीत होता है। प्रश्न पत्रों की छपाई गोपनीय तरीके से होनी चाहिए। व्यवस्था से जुड़े कुछ खास एवं विश्वासपात्र लोगों को ही इसकी जानकारी होनी चाहिए। परीक्षाएं चाहे ऑफलाइन हो या ऑनलाइन, तकनीकी विशेषज्ञों की समिति की देखरेख एवं मार्गदर्शन में आयोजित की जानी चाहिए ताकि गड़बड़ी की संभावना शून्य स्तर पर आ जाए।

ललित महालकरी, इंदौर

गड़बड़ी पर जवाबदेही तय हो

किसी भी गड़बड़ी पर जवाबदेही तुरंत तय कर दोषियों को कड़ी सजा दी जाए। ऐंटी पेपर लीक कानून का कड़ाई से पालन होना चाहिए। सूचना तकनीक पर आधारित परीक्षा प्रणाली तथा कंप्यूटर आधारित टेस्ट के लिए विश्वसनीय व प्रतिष्ठित कंपनियों की सेवाएं ली जाएं। स्वतंत्र जांच एजेंसी गठित हो जो समय-समय पर परीक्षा एवं चयन प्रणाली की जांच कर इसकी खामियों को उजागर करें तथा उसमें सुधार के लिए ठोस उपाय सुझाए।

विमलेश पणारिया, बदनावर

गड़बड़ी में शामिल सभी के खिलाफ हो कार्रवाई

प्रवेश परीक्षा में हो रही गड़बड़ियों को रोकने का उपाय यही है कि परीक्षा से संबंधित बनाई गई सभी समितियां अत्यंत गोपनीय होनी चाहिए। जिन परीक्षा केंद्रों पर नकल, फर्जीवाड़ा और गलत तरीके से ग्रेस देने का आरोप है, ऐसे सभी संदिग्ध केंद्रों की पुनः परीक्षा ली जानी चाहिए। गड़बड़ी करने वालों में शामिल संदिग्ध छात्र, कोचिंग सेंटर और परीक्षा केंद्रों के प्रभारियों का नार्को टेस्ट कराने पर भविष्य में कोई गड़बड़ी करने का दुस्साहस नहीं कर सकेगा।

रमेशचंद्र कर्नावट, उज्जैन

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने संयुक्त अरब अमीरात के विदेश मंत्री अब्दुल्ला बिन जायद अल नाहयान से मुलाकात कर दोनों देशों के बीच बहुआयामी व्यापक रणनीतिक साझेदारी की समीक्षा की और सहयोग बढ़ाने के लिए ऐसे नए क्षेत्रों पर चर्चा की। रविवार को संयुक्त अरब अमीरात की यात्रा पर पहुंचे जयशंकर ने क्षेत्रीय एवं वैश्विक मुद्दों पर भी अल-नाहयान के साथ चर्चा की।

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

पुलों का ढहना

बिहार में एक ही सप्ताह में तीन पुलों का ढहना जितना चिंताजनक, उतना ही निंदनीय भी है। तीनों पुल अलग-अलग प्रकार के हैं। एक पुल नया बना था, तो दूसरा पुराना हो चुका था और तीसरा तो अभी बन ही रहा था। अररिया में नवनिर्मित पुल करीब 180 मीटर लंबा था और जाहिर है, उसके निर्माण में गंभीर लापरवाही हुई है, इसलिए यह 18 जून मंगलवार को धूल में मिल गया। यह गहरे अफसोस और शर्म की भी बात है कि इस पुल का उद्घाटन तक नहीं हुआ था। इसे मलबे में बदलने में कुछ सेकंड लगे, पर वास्तव में पुल को मलबा बनाने की साजिश महीनों से चल रही होगी? पुल बनाने वाले ठेकेदार अगर इस काम की विशेषज्ञता नहीं रखते थे, तब उन्हें काम क्यों दिया गया? इस बात की पूरी जांच होनी चाहिए। हो सकता है, ठेकेदार या निर्माण कंपनी की सीधे-सीधे गलती न हो, पर अगर गलती है, तो अक्षम्य है। कमजोर पुल किसी भी वक्त जानलेवा साबित हो सकता है, जो भी ठेकेदार-इंजीनियर और शासकीय अधिकारी कमजोर पुल बनाते या बनवाते हैं, उन पर जान लेने की साजिश का मुकदमा चलना चाहिए।

शनिवार, 22 जून को सीवान जिले में जो पुल ढहा है, वह अपेक्षाकृत छोटा था और ढहते वक्त उसके नीचे बहुत तेजी से पानी बह रहा था। अगर आसपास के लोग समय पर न देखते, तो बड़ी दुर्घटना हो सकती थी। कहा जा रहा है कि यह पुल 30 साल पुराना हो चुका था। पूछा जा सकता है कि क्या समय-समय पर इसकी मरम्मत होती थी? क्या मरम्मत से पुल के जीवन को बढ़ाया जा सकता था? अगर पुल की मरम्मत मुमकिन नहीं थी, तो समय रहते उसके बगल में एक अन्य पुल का निर्माण हो जाना चाहिए था। आदर्श स्थिति तो यही है कि जो पुल पुराने पड़ चुके हैं, उनके समानांतर नए पुल का निर्माण समय रहते होना चाहिए। यह प्रशासन को परिभाषित करने और समाज को उससे बचाने के उपायों पर विचार किया। इस दशक में भारतीय दंड संहिता, नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम जैसे कानून अस्तित्व में आए और इनके जरिये भारतीय समाज ने अपराध और दंड की एक नई समझ विकसित की थी। यह समझ एक लंबे समय तक शासकों के तो काम आती ही रही, शासितों को भी उसने एक सर्वथा नई दुनिया से परिचित कराया। बेमन से ही सही, पर इन कानूनों को स्वीकृति मिली और लगभग दो शताब्दियों तक उन्होंने अपनी उपयोगिता साबित की, पर अब तो वर्षों से सारे हितधारक महसूस करने लगे थे कि इनकी प्रासंगिकता खत्म हो गई है और इनमें बुनियादी परिवर्तनों की जरूरत है।

बिहार में ढहने वाले तीनों पुल अलग-अलग प्रकार के हैं। एक पुल नया बना था, तो दूसरा पुराना हो चुका था और तीसरा पुल अभी बन ही रहा था।

बड़े परिवर्तनों के इस क्षण से भारतीय समाज का एक ऐसा ही साक्षात्कार 1 जुलाई को फिर होने जा रहा है, जब भारतीय दंड संहिता, नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम अपने नए अवतार में उसे मिलेंगे। यह विचारना दिलचस्प होगा कि भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता व भारतीय साक्ष्य अधिनियम नामक ये तीनों नए कानून किस हद तक अपने समय की कसौटी पर खरे उतरेंगे और उससे भी बढ़कर किस हद तक जनापेक्षाओं की पूर्ति करेंगे। जैसे ही इन नए कानूनों के ड्रॉफ्ट सार्वजनिक हुए, उन पर मिली-जुली प्रतिक्रियाएं आने लगीं। अनेक भाषाओं, बहुराष्ट्रीयताओं और क्षेत्रीय महत्वाकांक्षाओं वाले देश ने स्वाभाविक ही इनको अलग-अलग रूपों में लिया।

1860 के दशक में बने कानूनों ने दो अर्थों में बड़ा योगदान दिया था। पहला तो इनकी वजह से भारतीय समाज ने समानता जैसे मूल्य का सम्मान करना सीखा और दूसरा इन्होंने सही अर्थों में भारतीय उपमहाद्वीप को एक राष्ट्र-राज्य में तब्दील होने में मदद की थी। नए कानूनों की राह इसलिए आसान होगी कि अब समानता का विरोध करना काफी हद तक असंभव हो गया है। 1 जुलाई से लागू होने वाले कानूनों के समक्ष चुनौतियां दूसरी है और उन्हें पहले वाली से कमतर आंकना यथार्थ से मुंह चुराना होगा।

देश के प्रधान न्यायाधीश न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने हाल ही में नई दिल्ली में आयोजित एक सेमिनार में कहा कि इन विधेयकों का संसद से पारित होना एक ऐतिहासिक क्षण है, क्योंकि उनके ही शब्दों में दूसरे कानून हमारे समाज की रोजमर्रा की गतिविधियों को इन फौजदारी कानूनों से अधिक प्रभावित नहीं करते। वैसे, न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने नए कानूनों के कारगर इस्तेमाल के लिए सरकार के स्तर पर बड़े पैमाने पर संसाधनों के निवेश और सभी हितधारकों की सोच में परिवर्तनों को रेखांकित किया। दोनों जरूरी हैं, मगर सोच के स्तर पर बदलाव सबसे जरूरी है। खास तौर से भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (सीआरपीसी) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम के बदले प्रारूपों की सफलता के लिए बड़े पैमाने पर तकनीक की जरूरत होगी। एक औसत भारतीय दिमाग आसानी से नए परिवर्तनों को स्वीकार नहीं करता। कंप्यूटर का अनुभव इसका सबसे बड़ा उदाहरण है, जहां वर्षों तक हमने देखा कि अदालतों में कंप्यूटर डिब्बों में बंद रहे और वरिष्ठ अधिकारी इस लोभ से अपने कक्ष में कंप्यूटर रखते थे कि उसके चलते उनके कमरे वातानुकूलित हो जाते थे। इसी तरह जेलों और अदालतों में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग की सुविधा पिछले कुछ वर्षों से उपलब्ध होने के बावजूद असंख्य कैदी अब भी रोज अदालतों में रिमांड के लिए लाए जाते हैं। न्यायिक अधिकारियों के साथ पुलिस और जेल के अमले को तकनीकी रूप से उस स्थिति के लिए प्रशिक्षित करना एक दुष्कर कार्य होगा, पर यह तो करना ही होगा।

नई व्यवस्था लागू करने से सबसे बड़ी चुनौती होगी, मुकदमों के निस्तारण में लगने वाले समय में कमी लाना। नए कानूनों का ड्राफ्ट संसद में पेश करते समय दावा किया गया कि अब फौजदारी के मुकदमों का फैसला तीन वर्षों में हो जाएगा। इसके लिए कई तरह के प्रावधान भी किए गए हैं, पर जानकारों के मन में इन्हें लेकर संशय है। अब तक का अनुभव बताता है कि पीड़ित पक्ष को छोड़कर सारे हितधारकों की कोशिश मुकदमों को लंबा खींचने में होती है और पीड़ित अक्सर असहाय होकर टुकुर-टुकुर ताकने के सिवाय कुछ नहीं कर पाता। देखना है कि नए कानून किस हद तक इस मानसिक बाधा से पार पा सकेंगे।

मैंने बड़ी उत्सुकता से समझने की कोशिश की कि नए कानूनों के लागू होने के पहले कितनी जरूरी तैयारियां हुई हैं? मैंने पाया कि उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में पुलिस ने अपने विवेचकों और पर्यवेक्षण अधिकारियों के लिए कुछ प्रशिक्षण कार्यक्रम जरूर चलाए हैं, पर ज्यादा सघन हस्तक्षेप की जरूरत है। उत्तर प्रदेश में न्यायिक प्रक्रिया से जुड़े कुछ अधिकारियों से बात करके मुझे निराशा हुई और लगा कि उनकी उदासीनता नई व्यवस्था के सफल संचालन में बाधा बनेगी। सरकार को विवेचकों, न्यायिक अधिकारियों और अभियोजकों के प्रशिक्षण व जरूरी तकनीकी उपकरणों को उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए बड़े पैमाने पर निवेश करने की जरूरत होगी। यह मानना बहुत जरूरी है कि हमें विश्वस्तरीय सड़कों, हवाई अड्डों या बंदरगाहों जैसी आधारभूत सुविधाओं से कम जरूरत विश्वस्तरीय न्यायालयों, विवेचना उपकरणों और जेलों की नहीं है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

कसौटी पर परखे जाएंगे तीन कानून

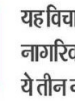

राय की राय

यहां स्कैन करें

विभूति नारायण राय | पूर्व आईपीएस अधिकारी

यह विचारना दिलचस्प होगा कि भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम नामक ये तीन नए कानून किस हद तक जनापेक्षाओं की पूर्ति करेंगे।

मनुष्यता के इतिहास में मूल्यगत परिवर्तन बड़े धीमे-धीमे होते हैं और कई बार तो सैकड़ों साल लग जाते हैं किसी ऐसे परिवर्तन को स्वीकृति प्राप्त करने में, जो हमारी समूची गतिविधियों को प्रभावित कर सकता हो। पिछली शताब्दी इस अर्थ में बड़ी महत्वपूर्ण रही है कि इसमें बदलाव बड़ी तेजी से घटित हुए। कई बार तो कुछ दशकों में ही इतने बड़े मूल्यगत परिवर्तन हुए, जितने कई शताब्दियों में हुआ करते थे। यौनिकता एक ऐसा ही क्षेत्र है, जिसमें बदलाव की सुनामी आसानी से महसूस की जा सकती है। लंबे संघर्षों के बाद मैग्नाकार्टा और फ्रांसीसी क्रांति के चरण पार करते हुए मानव इतिहास ने कानून की सर्वोच्चता को स्वीकार किया और धीरे-धीरे राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि मानने की धारणा कमजोर होती गई। इस बदलाव ने ही कानून के राज्य की अवधारणा को विकसित किया और वे सारे परिवर्तन संभव हुए, जिनकी कुछ शताब्दियों पहले कल्पना करना भी संभव न था।

मनुष्य जाति पहले तो परिवर्तनों को नकारने की कोशिश करती है, पर एक बार स्वीकृत करने के बाद कुछ को नियमों या संहिताओं के रूप में संरक्षित करती है और फिर उनके माध्यम से अपने जीवन का संचालन करती है। ऐसा ही एक क्षण भारतीय राज्य के जीवन में 1860 के दशक में आया, जब पहली बार उसने बड़े विस्तार से अपराध को परिभाषित करने और समाज को उससे बचाने के उपायों पर विचार किया। इस दशक में भारतीय दंड संहिता, नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम जैसे कानून अस्तित्व में आए और इनके जरिये भारतीय समाज ने अपराध और दंड की एक नई समझ विकसित की थी। यह समझ एक लंबे समय तक शासकों के तो काम आती ही रही, शासितों को भी उसने एक सर्वथा नई दुनिया से परिचित कराया। बेमन से ही सही, पर इन कानूनों को स्वीकृति मिली और लगभग दो शताब्दियों तक उन्होंने अपनी उपयोगिता साबित की, पर अब तो वर्षों से सारे हितधारक महसूस करने लगे थे कि इनकी प्रासंगिकता खत्म हो गई है और इनमें बुनियादी परिवर्तनों की जरूरत है।

बड़े परिवर्तनों के इस क्षण से भारतीय समाज का एक ऐसा ही साक्षात्कार 1 जुलाई को फिर होने जा रहा है, जब भारतीय दंड संहिता, नागरिक सुरक्षा संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम अपने नए अवतार में उसे मिलेंगे। यह विचारना दिलचस्प होगा कि भारतीय न्याय संहिता, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता व भारतीय साक्ष्य अधिनियम नामक ये तीनों नए कानून किस हद तक अपने समय की कसौटी पर खरे उतरेंगे और उससे भी बढ़कर किस हद तक जनापेक्षाओं की पूर्ति करेंगे। जैसे ही इन नए कानूनों के ड्रॉफ्ट सार्वजनिक हुए, उन पर मिली-जुली प्रतिक्रियाएं आने लगीं। अनेक भाषाओं, बहुराष्ट्रीयताओं और क्षेत्रीय महत्वाकांक्षाओं वाले देश ने स्वाभाविक ही इनको अलग-अलग रूपों में लिया।

1860 के दशक में बने कानूनों ने दो अर्थों में बड़ा योगदान दिया था। पहला तो इनकी वजह से भारतीय समाज ने समानता जैसे मूल्य का सम्मान करना सीखा और दूसरा इन्होंने सही अर्थों में भारतीय उपमहाद्वीप को एक राष्ट्र-राज्य में तब्दील होने में मदद की थी। नए कानूनों की राह इसलिए आसान होगी कि अब समानता का विरोध करना काफी हद तक असंभव हो गया है। 1 जुलाई से लागू होने वाले कानूनों के समक्ष चुनौतियां दूसरी है और उन्हें पहले वाली से कमतर आंकना यथार्थ से मुंह चुराना होगा।

देश के प्रधान न्यायाधीश न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने हाल ही में नई दिल्ली में आयोजित एक सेमिनार में कहा कि इन विधेयकों का संसद से पारित होना एक ऐतिहासिक क्षण है, क्योंकि उनके ही शब्दों में दूसरे कानून हमारे समाज की रोजमर्रा की गतिविधियों को इन फौजदारी कानूनों से अधिक प्रभावित नहीं करते। वैसे, न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने नए कानूनों के कारगर इस्तेमाल के लिए सरकार के स्तर पर बड़े पैमाने पर संसाधनों के निवेश और सभी हितधारकों की सोच में परिवर्तनों को रेखांकित किया। दोनों जरूरी हैं, मगर सोच के स्तर पर बदलाव सबसे जरूरी है। खास तौर से भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (सीआरपीसी) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम के बदले प्रारूपों की सफलता के लिए बड़े पैमाने पर तकनीक की जरूरत होगी। एक औसत भारतीय दिमाग आसानी से नए परिवर्तनों को स्वीकार नहीं करता। कंप्यूटर का अनुभव इसका सबसे बड़ा उदाहरण है, जहां वर्षों तक हमने देखा कि अदालतों में कंप्यूटर डिब्बों में बंद रहे और वरिष्ठ अधिकारी इस लोभ से अपने कक्ष में कंप्यूटर रखते थे कि उसके चलते उनके कमरे वातानुकूलित हो जाते थे। इसी तरह जेलों और अदालतों में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग की सुविधा पिछले कुछ वर्षों से उपलब्ध होने के बावजूद असंख्य कैदी अब भी रोज अदालतों में रिमांड के लिए लाए जाते हैं। न्यायिक अधिकारियों के साथ पुलिस और जेल के अमले को तकनीकी रूप से उस स्थिति के लिए प्रशिक्षित करना एक दुष्कर कार्य होगा, पर यह तो करना ही होगा।

नई व्यवस्था लागू करने से सबसे बड़ी चुनौती होगी, मुकदमों के निस्तारण में लगने वाले समय में कमी लाना। नए कानूनों का ड्राफ्ट संसद में पेश करते समय दावा किया गया कि अब फौजदारी के मुकदमों का फैसला तीन वर्षों में हो जाएगा। इसके लिए कई तरह के प्रावधान भी किए गए हैं, पर जानकारों के मन में इन्हें लेकर संशय है। अब तक का अनुभव बताता है कि पीड़ित पक्ष को छोड़कर सारे हितधारकों की कोशिश मुकदमों को लंबा खींचने में होती है और पीड़ित अक्सर असहाय होकर टुकुर-टुकुर ताकने के सिवाय कुछ नहीं कर पाता। देखना है कि नए कानून किस हद तक इस मानसिक बाधा से पार पा सकेंगे।

मैंने बड़ी उत्सुकता से समझने की कोशिश की कि नए कानूनों के लागू होने के पहले कितनी जरूरी तैयारियां हुई हैं? मैंने पाया कि उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में पुलिस ने अपने विवेचकों और पर्यवेक्षण अधिकारियों के लिए कुछ प्रशिक्षण कार्यक्रम जरूर चलाए हैं, पर ज्यादा सघन हस्तक्षेप की जरूरत है। उत्तर प्रदेश में न्यायिक प्रक्रिया से जुड़े कुछ अधिकारियों से बात करके मुझे निराशा हुई और लगा कि उनकी उदासीनता नई व्यवस्था के सफल संचालन में बाधा बनेगी। सरकार को विवेचकों, न्यायिक अधिकारियों और अभियोजकों के प्रशिक्षण व जरूरी तकनीकी उपकरणों को उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए बड़े पैमाने पर निवेश करने की जरूरत होगी। यह मानना बहुत जरूरी है कि हमें विश्वस्तरीय सड़कों, हवाई अड्डों या बंदरगाहों जैसी आधारभूत सुविधाओं से कम जरूरत विश्वस्तरीय न्यायालयों, विवेचना उपकरणों और जेलों की नहीं है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

तपन से राहत देता मानसून हमारी चिंता भी बढ़ा रहा

यहां स्कैन करें

के जे रमेश | पूर्व महानिदेशक, भारतीय मौसम विभाग

बेहिसाब गर्मी (हीटवेव) झेलने के बाद अब उत्तर भारत मानसूनी फुहारों से भीगने लगा है। इस साल केरल में मानसून समय पर 30-31 मई को पहुंच गया था, लेकिन पूर्व की तरफ बढ़ते-बढ़ते यह ठहर सा गया था। 20 जून के बाद यह फिर से सक्रिय हुआ है। दरअसल, केरल के तटों से टकराने के बाद मानसून दो रास्तों से ऊपर की ओर बढ़ता है। एक, बंगाल की खाड़ी की तरफ से और दूसरा, अरब सागर की ओर से। इस साल देश के पूर्वी हिस्से में बेशक यह ठहर गया था, लेकिन पश्चिमी हिस्से में, यानी अरब सागर की ओर से इसकी रफ्तार अच्छी थी और 10 जून तक यह महाराष्ट्र पहुंच चुका था। यहां कोई यह समझने की भूल न करे कि मानसून में यह ठहराव अप्रत्याशित था। इसे तो सामान्य मौसमी परिघटना माना जाता है। हां, 20 दिनों तक इसका यूं रुक जाना जरूर असामान्य था। आखिर ऐसा क्यों हुआ? इसका मुख्य कारण तो निस्संदेह जलवायु परिवर्तन है, पर इस साल मौसमी परिस्थितियों के कारण भी उत्तर-पश्चिम से पूर्व की तरफ बहने वाली सामान्य हवा बंगाल की खाड़ी से उठने वाली मानसूनी हवा पर भारी साबित हुई।

अभी जहां-जहां मानसून पहुंचा है, तेज बारिश हो रही है। सिक्किम, असम सहित पूरा पूर्वोत्तर इलाका बाढ़ की चपेट में आ चुका है।

बहरहाल, दिल्ली व उत्तर भारत के ज्यादातर इलाके अमूमन जून के अंतिम दिनों में भीगते हैं। तब तक यहां गर्मी बनी रहती है। चूंकि बीच-बीच में पश्चिमी विक्षोभ के कारण इन क्षेत्रों में बारिश हो जाती है, इसलिए गर्मी से राहत भी मिलती रहती है। मगर इस वर्ष पश्चिमी विक्षोभ के आने की दर तुलनात्मक रूप से कम रही और मानसून 20 दिनों तक ठहर गया, इसलिए हमने एक लंबी और अप्रत्याशित गर्मी झेली। इन दिनों तापमान लगातार 40 डिग्री से ऊपर बना रहा। नतीजतन, पहाड़ी इलाकों में भी गर्मी का रिकॉर्ड टूटा। अब छिटपुट बारिश से तापमान जरूर कम हो गया है, लेकिन वातावरण में नमी अधिक होने के कारण उमस बढ़ गई है। उम्मीद है, 27 जून के बाद जब मानसून पूरी तरह से उत्तर भारत में सक्रिय हो जाएगा, तो उमस भी खत्म हो जाएगी और गर्मी से हमें राहत मिल सकेगी।

इस बार के मानसून को लेकर एक चिंता भी है। अभी जहां-जहां यह पहुंचा है, तेज बारिश हो रही है। सिक्किम, असम सहित पूरा पूर्वोत्तर इलाका बाढ़ की चपेट में आ चुका है। इसी तरह, पश्चिमी तट, तेलंगाना, विदर्भ, मध्य प्रदेश जैसे तमाम इलाकों में सामान्य से कहीं अधिक बरसात हो रही है। उत्तर भारत में भी काफी अच्छी बारिश की संभावना मौसम विभाग ने जताई है। इससे यहां के प्यासे-पथराए खेतों को पर्याप्त पानी मिल सकेगा, लेकिन शहर-प्रबंधन के मोर्चे पर तैयारी का अभाव हमारी मुश्किलें भी बढ़ा सकता है।

अब तक का अनुभव अमूमन यही है कि पांच-दस सेंटीमीटर बारिश में ही शहर डूबने-उतराने लगते हैं। इसकी बड़ी वजह यही है कि नालों की पर्याप्त साफ-सफाई नहीं होती। फिर, हमने पानी के बहाव के प्राकृतिक रास्ते भी बंद कर दिए हैं। इस कारण, हल्की बारिश भी शहरी लोगों की मुश्किलें बढ़ा देती है। ऐसे में, सिविल सोसाइटी की तरफ से स्थानीय निकायों पर दबाव बनाना जरूरी है, अन्यथा इस तस्वीर को बदलना मुश्किल होगा। वैसे, यह स्थिति छोटे कस्बों की ही नहीं, महानगरों की भी है। मुंबई में साल 2005 में 99 सेंटीमीटर बारिश हुई थी और जल-निकासी की व्यवस्था को लगातार बेहतर बनाने का संकल्प लिया गया था, लेकिन आज भी बरसात होते ही मुंबई के कई इलाके पानी से डूब जाते हैं। यही कहानी बेंगलुरु, हैदराबाद जैसे अन्य महानगरों की भी है। हैदराबाद तो अभी तक इस सीजन का चार बाढ़ जलभराव झेल चुका है।

मौसम विभाग अपने तईं तत्परता दिखाने में पीछे नहीं हटता। बारिश का पूर्वानुमान वह रंगों के माध्यम से बताता रहता है, जिसमें नारंगी रंग बारिश शुरू होने और लाल रंग मूसलाधार बारिश होने का संकेत होता है। मगर प्रशासनिक तैयारी कमजोर रहने के कारण आम लोग परेशान होते रहते हैं। चक्रवाती तूफान को लेकर हमने जिस तरह से दिशा-निर्देशों पर अमल करना शुरू कर दिया है, ठीक उसी तरह की तत्परता शहरी प्रबंधन को तेज बारिश व बाढ़ से निपटने के लिए करनी होगी। तभी मानसून सही मायने में शहरवासियों को आनंद दे सकेगा, अन्यथा इसे आफत की बारिश ही माना जाएगा।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

इच्छा एक बड़ी समस्या

हममें से अधिकांश लोगों के लिए इच्छा एक बड़ी समस्या है- संपत्ति की, पद की, शक्ति की, सुविधा की, अमरता की, सातत्य की, प्रेम पाने की इच्छा; किसी ऐसी चीज को हासिल करने की इच्छा, जो स्थायी, संतोषजनक, कालातीत हो। अब यह इच्छा है क्या? यह क्या है, जिससे हम प्रेरित होते हैं या बाध्य होते हैं। मेरा मतलब यह नहीं कि जो कुछ हमारे पास है या जो भी हम हैं, उससे हमें संतुष्ट हो जाना चाहिए। यह तो मात्र उसका विपरीत हुआ, जो हम चाहते हैं। हम यह जानने का प्रयत्न कर रहे हैं कि इच्छा क्या है और यदि हम खुलेपन के साथ इसकी तह में जा सकें, तो मैं समझता हूं कि हम एक मौलिक परिवर्तन ला सकेंगे।

सामान्यतः परिवर्तन से हमारा यही मतलब होता है कि किसी एक इच्छित वस्तु से असंतुष्ट होने पर उसकी जगह हम कुछ और खोज लेते हैं। हम एक इच्छित वस्तु से निरंतर दूसरे की ओर डोलने लगते हैं, जिसको हम अधिक ऊंची, अधिक महान या अधिक परिष्कृत समझते हैं। मगर इच्छा कितनी ही परिष्कृत क्यों न हो, फिर भी वह इच्छा ही है और इच्छा की इस गति में एक अंतहीन संघर्ष, विपरीतों का द्वंद्व बना रहता है।

क्या इच्छा के स्वरूप और उसमें परिवर्तन की संभावना का पता लगाना जरूरी नहीं है? क्या बिना किसी प्रतीक और उसके संवेदन के इच्छा हो सकती है? जाहिर है, ऐसा नहीं होता। यह प्रतीक कोई चित्र हो सकता है या कोई व्यक्ति, शब्द, रूप, नाम या विचार हो सकता है, जो मुझे एक संवेदन देता है। यदि यह संवेदन सुखद है, तो मैं उसके प्रतीक को प्राप्त करना चाहता हूं, उसे अपने अधिकार में लेना चाहता हूं और उसे पकड़े रहना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि मेरा यह सुख बना रहे। समय-समय पर भावना के अनुसार मैं उस चित्र, छवि, विषय को बदलता रहता हूं। इस प्रकार पुराने का मैं प्रतिरोध करता हूं और उस नए के सामने आत्मसमर्पण करता हूं, जिसे मैं अधिक ऊंचा, अधिक महान, अधिक संतोषप्रद गमझता हूं। इस प्रकार इच्छा में प्रतिरोध और समर्पण होता है, जिसमें प्रलोभन समाया रहता है।

यदि मैं अपने भीतर इच्छा की समस्त प्रक्रिया का निरीक्षण करूं, तो देख पाऊंगा कि यहां सदा कोई न कोई लक्ष्य है, जिसकी ओर मेरा मन और अधिक संवेदन पाने के लिए लालायित है। यहां प्रतीक, शब्द और वस्तु ही यह केंद्र है, जिसके चारों ओर सभी कामनाएं, प्रयत्न, महत्वाकांक्षाएं निर्मित हुआ करती हैं। जितना अधिक मैं कुंठित होता हूं, उतना ही अधिक 'मैं' को शक्ति देता हूं। तो जब तक आशा है, उत्कंठा है, भय की पृष्ठभूमि बनी ही रहती है और यह उसी केंद्र को दृढ़ करती रहती है, जबकि क्रांति सिर्फ केंद्र पर ही संभव है, न कि सतह पर, क्योंकि सतही बदलाव मन का भटकाव भर है।

इच्छा कितनी ही ऊंची, महान और परिष्कृत क्यों न हो, फिर भी वह इच्छा ही है और इच्छा की इस गति में एक अंतहीन संघर्ष, विपरीतों का द्वंद्व बना रहता है।

जे कृष्णमूर्ति

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 25 जून, 1949

सबसे बड़ी बाधा

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच अच्छे संबंध होने चाहिए, परन्तु वस्तुतः हैं नहीं। उसमें सबसे बड़ा कारण तो मनोवैज्ञानिक है। राष्ट्रीयता और देशहित के विरुद्ध षड्यन्त्र करके तथा दैशिक एकता में भेद डालकर जिस तरह देश-विभाजन कराया गया, उसकी कड़वाहट मिट जाना आसान नहीं है और संशय तथा विभेद की नींव पर जब पाकिस्तान का आधार है, तो उसके बन जाने पर भी ऐसी भावनाओं का मिट जाना स्वाभाविक नहीं है। फिर भी यदि पुरानी बातों को भुलाकर आगे पर ही ध्यान रखा जाये, तो यह मानते हुए भी कि पारस्परिक मैत्री एवं सद्भावना में ही दोनों देशों का हित है, उस मैत्री एवं सद्भावना के बीच सबसे बड़ी बाधा निष्क्रमणार्थियों की सम्पत्ति की है, जिसे जान बचाकर भागते समय उन्हें छोड़कर आना या जाना पड़ा है। प्रथम तो इस तरह भागना ही कोई अच्छी भावना नहीं छोड़ सकता, फिर जब अपनी तथा अपने पूर्वजों की कमाई से हाथ धोकर निर्वाह के लिए परमुखापेक्षी होना पड़ रहा हो, तब तो और कड़वाहट ही आ सकती है। अतः दोनों देशों के बीच मैत्री एवं सद्भावना इष्ट है तो इस सबसे बड़ी बाधा को रास्ते से हटाना ही होगा।

यह संतोष की बात है कि इस तरफ दोनों ही देशों का ध्यान है और इस वर्ष के आरम्भ में इस संबंध में एक समझौता भी अन्तःऔपनिवेशिक सम्मेलन में किया गया था। परन्तु समझौता करना उतना महत्व नहीं रखता, जितना कि उस पर अमल होना आवश्यक है। इस दृष्टि से सोचें, तो संतोष के बजाय परेशानी ही सामने आती है। जनवरी १९४९ में जो समझौता हुआ था, उसमें शहरी अचल सम्पत्ति की निजी बिक्री एवं अदला-बदली की बात मानी गई थी और निष्क्रमणार्थियों की सम्पत्ति के संरक्षक (करस्टोडियन) की मार्फत या उनकी देखरेख में यह काम होना था। किन्तु छः महीने का अनुभव बताता है कि समझौता केवल कागजी रहा और अमल में कुछ ऐसी बातें हुईं, जिनसे सम्पत्ति की बिक्री या अदला-बदली में रुकावट ही पड़ सकती थी। उस समझौते की विफलता का दायित्व पाकिस्तान पर है, क्योंकि उसने कराची में अब तक कोई संरक्षक नियुक्त नहीं किया और समझौते के तुरन्त पश्चात आर्डिनेंस निकालकर इस काम के लिए वहां जाने वाले व्यक्तियों पर पाबन्दी लगा दी कि वे आयकर की पूरी अदायगी का प्रमाण-पत्र पेश किये बिना पाकिस्तान से न जाने पावें।

राजनाथ सिंह | केंद्रीय रक्षा मंत्री

इस बार का आम चुनाव देश के लोकतंत्र के सामर्थ्य और उसकी मजबूत जड़ों की गहराई को दुनिया के सामने प्रस्तुत करता है। इस चुनाव में 64 करोड़ से ज्यादा लोगों ने मतदान किया है।

सिर्फ कानून बनाने से बात नहीं बनेगी

इन दिनों विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं के पेपर लीक का मुद्दा गर्माया हुआ है। सरकार ने राष्ट्रीय स्तर की पात्रता परीक्षाओं में नकल और लीक रोकने केलिए 'लोक नकल-रोधी कानून' (लोक परीक्षा (अनुचित साधनों की रोकथाम) अधिनियम, 2024' बनाया, उसे प्रभावी कर दिया गया है। कानून का डर दिखाकर अपराध रोकने की यह कोशिश सराहनीय है, पर इस मुगालते में नहीं रहना चाहिए कि कानून होने के भय मात्र से अपराध रुक जाएंगे। यह अपराध तभी रुकेगा, जब तंत्र पूरी तरह से ठीक होगा। मेरा मानना है कि हजारों-लाखों परीक्षार्थियों व बेरोजगारों के भविष्य से खिलवाड़ करने वालों को सख्त सजा मिलनी चाहिए। मुमकिन हो, तो फांसी की सजा का प्रावधान हो, ताकि वे अपराध करने से पहले हजार बार सोचें। हमारी प्राथमिकता अपराध को होने से पहले रोकने की होनी चाहिए, न कि अपराध होने के बाद दंड देने की।

जाहिर है, नकल रोकने के लिए सिर्फ कानून पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। तंत्र के सभी पक्षों की पारदर्शी जांच होनी चाहिए। नकल से प्रभावित विद्यार्थियों-अभ्यर्थियों की मानसिक स्थिति किसी से छिपी नहीं है। यह शिक्षा तंत्र की विफलता है कि वह अपने भीतर घुसे बैठे नकल करने वालों को रोक नहीं पा रहा है। गुनहगारों का दुस्साहस इतना बढ़ गया है कि तमाम बंदोबस्त के बावजूद पेपर लीक हो रहा है। ऐसा इसलिए हो रहा है, क्योंकि हमारा पूरा ध्यान इस बात पर है कि नकल-माफियाओं को सजा मिले, जबकि हमारा प्रयास ऐसे प्रावधान तय करना होना चाहिए कि नकल-माफिया अपराध को अंजाम देने का साहस ही न जुटा पाएं।

पेपर लीक रोकने के कुछ व्यावहारिक उपाय अपनाए जा सकते हैं। मसलन, पेपर ऑनलाइन पद्धति से लिए जाएं, वे इस कदर पासवर्ड से सुरक्षित किए जाएं कि अभ्यर्थी द्वारा विशेष पासवर्ड डालने पर ही परीक्षा हॉल में पेपर खुले, ऑफलाइन परीक्षा की स्थिति में संबंधित केंद्राध्यक्ष को प्रश्नपत्र उसी दिन पासवर्ड प्रोटेक्टेड फाइल के रूप में भेजा जाए, परीक्षा कराने वाली एजेंसी की जवाबदेही तय की जाए, किसी भी स्तर पर गलती/अपराध में संलिप्त पाए जाने पर कठोर सजा-जुर्माना व मान्यता रद्द करने संबंधी प्रावधान हो, केंद्र पर परीक्षा संबंधी प्रत्येक गतिविधियों की वीडियो रिकॉर्डिंग हो, अभ्यर्थियों का बायोमेट्रिक सत्यापन हो, ताकि फर्जी परीक्षार्थी परीक्षा में शामिल न हो सकें, परीक्षा होने के पूर्व तमाम एजेंसियां सतर्क रहें और सोशल मीडिया के मंचों की पूरी निगरानी हो। अगर संजीदगी से इस दिशा में काम होता है, तो हम अपने बच्चों को बेहतर माहौल दे सकेंगे।

मोहित सोनी, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम
नकल-रोधी कानून

बेईमानों को सबक सिखाने की तैयारी

मोदी सरकार ने परीक्षार्थियों के भविष्य से खिलवाड़ करने वाले बेईमान लोगों को सबक सिखाने के लिए लोक परीक्षा (अनुचित साधनों की रोकथाम) अधिनियम, 2024 अमल में ला दिया है। यह कानून परीक्षाओं में गड़बड़ी रोकने में कितना कामयाब होगा, यह तो आने वाला समय ही बताएगा, लेकिन सवाल यही है कि हमारे नीति-नियंता अब तक आखिर क्यों नौजवानों के भविष्य से हो रहे खिलवाड़ पर आंखें मूंदकर बैठे थे? अगर इस तरह के प्रयास पहले किए जाते, तो संभवतः नीट और नेट के परीक्षार्थियों की जो गत हुई, वह नहीं होती। वैसे, यह भी कम अफसोस की बात नहीं कि आज देश में ज्यादातर लोग परदे के पीछे से सफलता की सीढ़ी चढ़ना चाहते हैं। वे अनुचित तरीकों का इस्तेमाल करके डिग्री हासिल करते हैं व नौकरी पाना चाहते हैं।

यह सब व्यवस्थागत दोष का नतीजा है। परीक्षाओं का पेपर लीक होना सत-प्रतिशत भ्रष्ट व्यवस्था का नतीजा है। यह भ्रष्टाचार निर्विवाद तौर पर राजनेताओं की छत्रछाया में ही पनपा है। अगर सरकारों ने इस बीमारी का इलाज शुरू में ही करने की रुचि दिखाई होती, तो आज पेपर लीक या नकल जैसी बीमारी मेहनतकश युवाओं के लिए मुसीबत नहीं बनती या इनके सुनहरे भविष्य के सपने को ध्वस्त न करती। इसलिए हमें व्यवस्था पर चोट करनी होगी। जब तक ऐसे गलत काम करने वाले सभी सरकारी अफसरों से लेकर निचले पदों के कर्मचारियों व राजनेताओं

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। मंगलवार, 25 जून 2024

बड़ी हैं चुनौतियां

सोमवार को 18वीं लोकसभा के पहले सत्र की शुरुआत हो गई। हालांकि शुरुआती दो दिन शपथ ग्रहण की औपचारिकता ही होनी है, लेकिन फिर भी दोनों पक्षों के तेवर पहले ही दिन से यह संकेत दे रहे हैं कि न तो विपक्ष इस बार सदन में अपनी ताकत दिखाने का कोई मौका चूकना चाहता है और न सत्ता पक्ष उसे हलके में लेने के मूड में है।

पिछला अनुभव | वैसे संख्या बल में जो भी थोड़ी-बहुत कमी रह गई हो, तथ्य यह है कि 17वीं लोकसभा में भी विपक्ष ने विरोध की डिग्री में कोई कमी नहीं रहने दी थी। यह बात सदन के अंदर और बाहर विपक्ष के हंगामे, वॉकआउट, धरना-प्रदर्शन वगैरह में ही नहीं, सदन से विपक्षी सांसदों के निलंबन जैसी कार्रवाइयों में भी झलकती रही। बेशक इन सब पर पक्ष और विपक्ष का अपना अलग रुख है, उसके पीछे उनकी अपनी दलीलें भी हैं, लेकिन एक स्तर पर देखा जाए तो यह एक धड़कते, जिंदा लोकतंत्र की ज्वलंत निशानी भी मानी जाएगी।

18वीं लोकसभा का पहला सत्र

विपक्ष की कमजोरी | बावजूद इसके, पिछली लोकसभा में कई मामलों में सत्ता पक्ष के सामने विपक्ष की कमजोरी भी दर्ज होती रही। पिछले करीब दस साल सदन में नेता प्रतिपक्ष की जगह खाली रही। 17वीं लोकसभा में तो कोई डेप्युटी स्पीकर भी नहीं बनाया गया और विपक्ष सरकार को इसके लिए मजबूर नहीं कर सका।

बढ़ा हुआ मनोबल | इस पृष्ठभूमि में 18वीं लोकसभा में विपक्षी सदस्यों की बढ़ी हुई संख्या उनके मनोबल और आत्मविश्वास को बढ़ाए हुए है। पहले दिन ही सदन के बाहर संविधान हाथ में लिए प्रदर्शन करते विपक्षी सांसदों ने यह संकेत दिया कि वे सरकार पर दबाव बनाने का कोई मौका इस बार नहीं चूकना चाहते। दूसरी ओर सत्ता पक्ष भी अपने गठबंधन की मजबूती को कम समझने वालों के सारे भ्रम दूर करते चलने को कृत संकल्प दिख रहा है। विपक्षी सांसदों के प्रदर्शन के जवाब में आपातकाल की याद दिलाने वाला पीएम मोदी का बयान बताता है कि विपक्षी दलों की हर ईंट का जवाब पत्थर से देने की तैयारी सत्ता पक्ष ने भी कर रखी है।

चुनौती दोनों तरफ | मुद्दों की कमी नहीं है। चाहे चुनावी से पहले के अग्निवीर और जाति जनगणना जैसे मुद्दे हों या महंगाई और बेरोजगारी जैसे शाश्वत माने जाने वाले सवाल या फिर पेपरलीक से जुड़े आरोप- सदन में ये उठेंगे ही। असल चुनौती यह है कि बदले समीकरणों के बीच विपक्ष अपनी बढ़ी हुई ताकत का कितना कुशल और रचनात्मक इस्तेमाल कर सकता है और सत्ता पक्ष इस ऊर्जा को ईंधन बनाते हुए किस हद तक देश के विकास को गति दे पाता है। यही कसौटी है जो मतदाताओं के इस जनादेश ने दोनों के लिए तय की है।

धूप-छांव

जो डूबा सो पार

प्रणव प्रियदर्शी

इधर कुआं और उधर खाई – कहावत यूं ही नहीं बनी है। आम तौर पर जिंदगी में विकल्प ऐसे ही मिलते हैं कि आप न इसे चुन सकते हैं न उसे। होश संभाल ही रहा था कि प्रश्न आ खड़ा हुआ, आगे साइंस लेना है या आर्ट्स। दुविधा यहां नहीं थी। चाचा-चाची, मामा-मामी, भैया-दीदी, यार-दोस्त- सब इस बारे में एकमत थे कि साइंस ही लेना है। टैलेंटेड बच्चे तो साइंस ही लेते हैं। जाहिर है, मेधावी बच्चों की श्रेणी से निकल कर औसत विद्यार्थियों की कैटिगरी में शामिल होने जैसी नादानी तो मैं कर नहीं सकता था। सो तय कर लिया कि साइंस ही लूंगा।

अग्निपरीक्षा उसके बाद शुरू हुई। साइंस में क्या लिया जाए? बायॉलजी की मुश्किलों को इस बात की आड़ दी जा सकती थी कि मेंढक काटना अपने वश का नहीं। मगर दूसरी तरफ यमराज की शक्ल में मैथ्स खड़ा था। उससे कैसे निपटें। मामला कुएं और खाई का ही था। सो दाएं-बाएं देखने के बजाय मैं आंख मूंद कर उलटे पैर वापस हो लिया। डॉक्टर, इंजीनियर बनने की जिम्मेदारी दोस्तों और ममेरे-फुफेरे-चचेरे भाइयों पर डाल मैंने अपने कंधों की खैर मनाई।

विषय के तौर पर साइंस की पढ़ाई से उस दिन पीछा छूट गया, लेकिन जिंदगी में यह सवाल बना ही रहा कि इस गली जाना है या उस गली। पढ़ाई और प्रशिक्षण जैसी कवायद पूरी करने के बाद जो विकल्प मिले, उनमें एक यह था कि उस समय तक कुछ परिचित हो चली दिल्ली में बेरोजगारी खत्म होने का इंतजार करते रहा जाए। दूसरा रास्ता यह था कि उम्मीद की एक टिमटिमाती लौ के सहारे अपरिचित, अनजान और अपने रहस्यमय ग्लैमर से भय पैदा करती मुंबई की अनिश्चितताओं को गले लगा लिया जाए।

यही हाल आगे भी रहा। चाहे मामला जीवनसाथी खुद चुनने या मां-बाप के चयन को स्वीकारने का हो या चल रही नौकरी की निश्चितता के बजाय बेरोजगारी की अनिश्चितता चुनने का या फिर एक शहर की बंधी-बंधाई जिंदगी छोड़ दूसरे शहर की ओर चल देने का- विकल्प कुएं और खाई जैसे ही रहे हर बार। और दुविधा हल भी ऐसे ही हुई हमेशा कि चाहे इसे चुनो या उसे, मरना तो है ही। तो मरने की तैयारी के साथ, जो सही लग रहा हो, उसे चुन लो। अलग-अलग रूपों में हर बार मौत ही चुनी, लेकिन कमाल देखिए कि मरा नहीं अभी तक।

कुछ भी कहिए दम है इस बात में कि अगर मरने की तैयारी कर लो तो मौत भी पीछे हट जाती है। 'जो डूबा सो पार' भले प्यार की नदी के लिए कहा गया हो, लागू जिंदगी पर भी होता है। आखिर यह जिंदगी भी अपनी संपूर्णता में एक विराट प्रेमकथा ही तो है।

बोल वचन

दुआर दहकार दो

राहुल पाण्डेय

गर्मियों में जब सूर्यदेव के ताप से धरती दहक रही होती है, लू धूल के साथ छोटे-छोटे बवंडरों को उठाती है, तब घर-घर से दहकार की पुकार आती है। कहीं कोई घरैतिन आंगन में पानी छिड़कती है तो कहीं कोई बाबू साहब दुआर (दालान) दहकार रहे हैं। जब घर-दुआर दहकार दिया जाता है, तो घंटे भर इंतजार किया जाता है। दहकारना धरती की दहक कम करता है। अवध में बोले जाने वाले दहकारने का शब्दकोश में अर्थ है- धूल आदि दबाने के लिए जमीन पर पानी का छिड़काव करना। इन दिनों गांव-गांव में लोग दिन में कम से कम दो बार अपना घर-दुआर दहकारते हैं। जब धरती की दहक कम हो जाती है, तब बिछती है खटिया, आता है चना-चबैना और गाए जाते हैं गीत। दहकार दहन शब्द से लोक में आया है। दहन शब्द संस्कृत और फारसी, दोनों में है। संस्कृत में दहन का अर्थ ताप से है तो फारसी में मुंह से है। लेकिन दहकारना एकदम उल्टा अर्थ रखता है, यानी जो दहन को कम करे। यह प्रमाण है कि लोक शब्द तो लेता है, पर अर्थ अपने बनाता है। इंग्लिश में इसका समानार्थी नहीं है, बल्कि इसके लिए दो शब्द मिलाकर प्रयोग किए जाते हैं- dust suppression या watering down। वैसे जरूरी नहीं कि हमेशा इंसान ही दहकारे। कभी-कभी स्वयं हरि आकर धरती दहकार जाते हैं, जैसा कल दस मिनट की बारिश में हुआ। हरि की इसी दहकार पर बनी एक रील में कोई पीछे से कह रहा था कि चिंता मत करो, अभी भगवान जी ने जलते तवे पर पानी छिड़का है, अब हम सबका डोसा बनेगा।

Subrata Dhar

17वीं लोकसभा डेप्युटी स्पीकर से वंचित रह गई थी, पर इस बार विपक्ष किसी रियायत के मूड में नहीं

स्पीकर ही नहीं, डेप्युटी पर भी रस्साकशी

दयाशंकर शुक्ल सागर

हालात इतने असहज नहीं होते अगर NDA सरकार ने अपने पिछले कार्यकाल में विपक्ष के किसी सांसद को डेप्युटी स्पीकर बनाने पर सहमति दे दी होती। 17वीं लोकसभा देश की पहली और अकेली लोकसभा थी, जिसमें कोई डेप्युटी स्पीकर नहीं रहा। 2019 के चुनावी नतीजों से विपक्ष इतना हताश था कि BJP के सांसद, ओम बिरला बिना किसी शोर-शराबे के आसानी से लोकसभा स्पीकर चुन लिए गए। मगर डेप्युटी स्पीकर का पद खाली रहा।

विपक्ष के बदले तेवर | इस बार हालात और विपक्ष के तेवर बदले हुए हैं। उसने शर्त रख दी है कि अगर सरकार किसी विपक्षी नेता को डेप्युटी स्पीकर बनाने पर सहमत नहीं होती है तो विपक्ष लोकसभा स्पीकर पद के लिए चुनाव लड़ सकता है। यह स्थिति सरकार के लिए असहज होगी क्योंकि अगर विपक्ष ने लोकसभा स्पीकर पद के लिए अपना कोई उम्मीदवार मैदान में उतारा तो यह आजाद भारत के संसदीय इतिहास में अनोखी और दुर्लभ घटना होगी। यहां स्पीकर का चयन आम सहमति से होता रहा है।

प्रोटोकॉल लिस्ट में छठा स्थान | भारत में लोकतांत्रिक संसदीय प्रणाली वेस्टमिंस्टर मॉडल पर चलती है। इस प्रणाली में लोकसभा स्पीकर को सबसे महत्वपूर्ण दर्जा दिया गया है। वह संसद का मुखिया होता है। सभी संसदीय मामलों में उसका फैसला आखिरी होता है। देश में संवैधानिक पदों की प्रोटोकॉल लिस्ट में स्पीकर को भारत के मुख्य न्यायाधीश के साथ यानी छठे रैंक पर रखा गया है।

क्यों तीखे हैं विपक्ष के तेवर

- पिछली बार से ज्यादा विपक्षी सांसद
- घटक दलों पर निर्भर करती है सरकार
- स्पीकर के लिए चुनाव कराने का दबाव

विपक्ष का विश्वास अहम | स्पीकर चुनने के लिए सदन का साधारण बहुमत काफी है। इसलिए सरकार को पसंद का स्पीकर चुनने में कोई मुश्किल नहीं होती। लेकिन संसद के सुचारू संचालन के लिहाज से यह बात अच्छी मानी जाती है कि स्पीकर को पक्ष और विपक्ष दोनों का विश्वास हासिल रहे। यही वजह है कि भारत में सत्तारूढ़ और विपक्षी पार्टियां, इस मसले पर टकराव के बजाय मेलजोल से रास्ता निकालना बेहतर समझती रही हैं।

बाध्यता नहीं | डेप्युटी स्पीकर या 'सेकेंड चेयर' विपक्ष की दुखती रग है जिसके लिए वह पिछले पांच साल से परंपरा के नाम पर लड़ रहा है। परंपरा यह जरूर रही है कि डेप्युटी स्पीकर का पद विपक्ष को दिया जाए, लेकिन सरकारें इसके लिए कभी बाध्य नहीं रहीं। अतीत में कई ऐसे मौके आए जब स्पीकर और डेप्युटी स्पीकर दोनों सत्तारूढ़ दल के चुने गए। पचास और साठ के दशक में कांग्रेस ने कई सालों तक अपनी ही पार्टी के सांसद को डेप्युटी स्पीकर बनाया।

कोई समयसीमा नहीं | संविधान का अनुच्छेद 93 कहता है कि 'लोकसभा जितनी जल्दी हो सके अपने दो सदस्यों को स्पीकर और डेप्युटी स्पीकर चुनेगी और जब कभी स्पीकर या डेप्युटी स्पीकर का पद रिक्त हो जाए, सदन किसी अन्य सदस्य को, जरूरत के मुताबिक स्पीकर या डेप्युटी स्पीकर चुन लेगा।' चूंकि संविधान में कोई स्पष्ट समयसीमा तय नहीं है इसलिए बीते पांच साल के दौरान लोकसभा में कोई डेप्युटी स्पीकर नहीं चुना गया।

ओढ़ ली चुप्पी | लोकसभा में कांग्रेस के नेता अधीर रंजन चौधरी ने स्पीकर ओम बिरला को चुनाव या सर्वसम्मति से प्रक्रिया शुरू करने के लिए पत्र लिखा था। लेकिन बिरला इस पर सार्वजनिक टिप्पणी करने से बचते रहे। BJP भी चुप्पी साधे रही। मामला सुप्रीम कोर्ट तक गया। देश के मुख्य न्यायाधीश डी वाई चंद्रचूड़ की अगुआई वाली पीठ ने एक जनहित याचिका पर केंद्र से जवाब मांगा, जिसमें कहा गया था कि 19 जून, 2019 को गठित 17वीं लोकसभा के लिए डेप्युटी स्पीकर का चुनाव नहीं करना 'संविधान की मूल भावना के खिलाफ' है। मगर अब 18वीं लोकसभा गठित हो चुकी है। देखा जाए तो यहां परंपरा और संविधान दोनों का अतिक्रमण हुआ।

संसद का सत्र | 18वीं लोकसभा का पहला सत्र 24 जून से शुरू हो गया। 26 जून को नए स्पीकर का चुनाव होना है। देखा जाए तो इस बार मोदी सरकार सही मायनों में गठबंधन के नाजुक धागे से बंधी है। TDP और JDU, NDA सरकार की दो बैसाखियां हैं। फिलहाल इनके तेवर नरम हैं लेकिन जैसी खबरें आ रही हैं कि TDP चीफ चंद्रबाबू नायडू और JDU नेता नीतीश कुमार चाहते हैं कि उनके दल का कोई सांसद स्पीकर या डेप्युटी स्पीकर बने।

दूध की जली BJP | ध्यान रहे, गठबंधन के दबाव में 1998 में अटल बिहारी वाजपेयी सरकार को TDP का स्पीकर बनाना पड़ा था। तब स्पीकर के ही एक फैसले के कारण सिर्फ एक वोट से अटल सरकार गिर गई थी। ऐसे में दूध की जली BJP कभी नहीं चाहेगी कि स्पीकर पद किसी और के पास रहे। अगर कोई दबाव नहीं रहा तो ओम बिरला BJP की पहली पसंद होंगे। उन्हें कैबिनेट मंत्री या कोई और पद न दिए जाने के कारण संदेश गया है कि सरकार उन्हें बतौर स्पीकर रिपीट करना चाहती है। स्पीकर पद की दौड़ में अमलापुरम से पहली बार TDP सांसद बने जीएम हरीश बालयोगी और BJP सांसद डी पुरंदेश्वरी का नाम भी चर्चा में है।

निगाहें डेप्युटी स्पीकर पर | स्पीकर के चुनाव के बाद ही डेप्युटी स्पीकर के चुनाव की प्रक्रिया शुरू होगी। असल सियासी खेल तब शुरू होगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

मचमच करने कोइच काम समझने का भिड़ू

दीपक पाचपोर

भौत सा लोग अईसा होताए जिनकूं कोई बी आईटम का भीतर बिलकुल बी लफड़ा नई मांगताए। उसका जो बी काम होएंगा टोटल परफेक्ट होना मांगताए। उसकूं घर का भीतर चा एकदम टाइम पे मिलना मांगताए, नाष्टा एक मिनट बी इदर से उदर नई होना मांगताए। ट्रेन टाइम पे आना मांगताए।

पन भिड़ू, अईसा भाई लोग कूं परफेक्शन खाली दूसरा आदमी का भीतर मांगताए। खुद का बखत सारा टाइमिंग का वो बाट लगाएंगा। जबी मर्जी होएंगा तबी सुबू आराम से नऊ बजे उठेंगा। ग्यारा बजे शेविंग करेंगा, दो घंटा घर का बाहर फ्रेंड लोग का साथ गप्पा मार के आएंगा, तीन बजे खाना खाएंगा, लगे तो रात कूं बारा बजे तलक टीवी पे टाइम खोटी करेंगा। अपना छोड़ के सबका काम झक्कास होना मांगताए। अपुन का एक फ्रेंड अईसाईच होताए। वो अबी अपुन का पास आएला। वो बोलताए- 'बॉस, दुनिया का भीतर कोई भी अपना काम ठीक से करेंगा कहताए पन करता नई।' अपुन पूछा- 'वो कईसा?' वो अपुन कूं समझाएला- "जबी कोई नौकरी करेंगा, काम पे लगेंगा तबी उसकूं ज्वाइनिंग लैटर में कहताए न कि भिड़ू तुम अपना काम इमैनदारी से करेंगा, पन वो करताए क्यों? नई न? अभी कोई उदर आमदार बनेंगा, खासदार बनेंगा, मंत्री बनेंगा। वो बी अईसाईच शपथ लेताए। पन वो किदर करताए? जबी तलक तुमसे चार हरा पत्ती नई लेंगा वो तुमारा रैशन कार्ड पे टप्पा नई लगाएंगा।

अबी तुम चार लोग का साथ उठता बैठता है। कोई तुमकूं बोलेंगा कि 'बाबा, तुमारा इत्ता जान-पहचान होताए तुम अपुन का कोई सगा वाला का ट्रांसफर कराने कूं सकताए क्या?' तुम उसकूं शान से कोई नेते के पास लेके जाएंगा। वो काम करेंगा कि नई करेंगा पन पैले तुमकूं भाषण देगा कि 'जिदर लगेलए अबी उसकूं उदरईच लगे रैने देने का।' तुम जास्ती हात-पैर जोड़ेगा तबी वो बी इदर भेजेगा, उदर भेजेगा। लास्ट में बोले तो वो बी गांधी जी का चेहरा देखके तुमारा काम करेंगा।' अपुन का दोस्त हैराण होके बोलताए- 'ब्रादर, काम नई करने का तबी सीदा बताने का। इत्ता मचमच अऊर टाइम खोटी करना जरूरी होताए क्या?' अपुन बताया- 'बॉस, इसकूं मचमच नई कहने का। येईच काम होताए। जित्ता जास्ती टाईम खोटी करेगा उसकूं उत्साईच बड़ा काम मान के लेने का। तुम जबी काम लेके जाएंगा, हाफिस का भीतर चार लोग देखेंगा कि तुमारा अईसा तेढ़ा काम नेता करताए तबी बाकी लोग बी इंप्रेस होताए। सच्ची पूछेगा तो हल्ला कोईच काम समझने का।' फ्रेंड पूछेला- वो कईसा? अपुन बताएला- 'बॉस, इदर गल्ली से लेके दिल्ली तक तुम देखेंगा कि जिदर बी बड़ा काम करने का तुम सोचेंगा उदर उत्साईच मचमच होताए।'

तुम क्या सोचताए कि ये काम नई होताए? येईच काम होताए! तुमकूं काम का बात एक बी पेपर, टीवी का भीतर नई मिलेंगा। फुल टू बोमाबोम! सुरु-सुरु अपुन बी येईच सोचता था कि जबी कोई मीटिंग, बैठक का भीतर इत्ता हल्ला होताए तबी काम किदर कूं होताए? तुम जानताए भिड़ू, कि अपुन का भेजा का भीतर कोई बी लोचा होएंगा तबी अपुन सीदा अपना फ्रेंड बाबूराव को पूछताए। बाबूराव से अपुन पूछा कि 'ये लोग जो बड़ा-बड़ा काम करने का शपथ लेताए वो सच्ची काम करताए क्या? बाबूराव समझाया- 'कल्ला करताए उसीच कूं काम मानने का। पन तुम ये नई पूछने का कि किसका काम करताए। वो अपना काम करताए।' जित्ता तुमारा छोकरा-छोकरी का एजुकेशन, काम-धंधा, सवाल पे कल्ला होएंगा, उत्साईच भाई लोग का अपना काम होताए पन दिखता नई। पब्लिक कूं लगताए कि भाई लोग उनका काम करताए। इस करके वो बोमाबोम का पगार लेताए।

AI Image

खाली पीली

शेयर करें अपने अनुभव
आम मुंबइया भाषा में यह लेख कैसा लगा हमें बताएं **nbtreader@timesgroup.com** पर, और सब्जेक्ट में लिखें-**'खाली पीली'**

THE SPEAKING TREE
और पढ़ने के लिए देखें
hindi.speakingtree.in

ज्ञान सबमें है, बस उसे दीप की तरह जगमगाना है

रमेश भाई ओझा

हमारे शास्त्रों में व्यक्ति के भीतर जो ज्ञान है उसे प्रगट करने के विधान को ज्ञानयज्ञ कहा गया है। ज्ञान नित्य वस्तु है और जो नित्य है उसका कभी अभाव नहीं होता है, वह पर्याप्त रहता है। ज्ञान कभी समाप्त नहीं होता, वह अप्रकट हो सकता है, थोड़े समय के लिए छिप सकता है। हम सच्चिदानंद स्वरूप हैं। ज्ञान हमारा स्वरूप है। वास्तव में ज्ञान आने-जाने वाली वस्तु नहीं है। लेने और देने की चीज भी नहीं है। सद्गुरु ज्ञान देते नहीं, वह शिष्य के भीतर छिपे हुए ज्ञान को प्रकट करते हैं। जिस प्रकार दूध से दही बनाया। दही को मथकर माखन को प्रकट किया। फिर माखन को गर्म कर उससे घी बनाया। घी से हम दीप को प्रकट करते हैं। दीप जलाते हैं उसका जन्म नहीं होता, उसको उत्पन्न नहीं करते। उसको प्रकट करते हैं। इसलिए कहते हैं, दीप प्रागट्य। दीप से ही दीप जलेगा, ज्योति से ज्योति जलेगी। ज्ञान से अज्ञान दूर होगा।

सद्गुरू का अर्थ है प्रगट दीप। यानी जो दीप प्रकाश फैला रहा हो। शिष्य का अर्थ है, वह दीप जो अभी प्रगट होने के लिए तैयार नहीं है। प्रगट दीप के माध्यम से अप्रगट दीप प्रज्वलित हो सकता है। जब प्रगट हो जाता है दीप, तो वह पूजनीय हो जाता है, वंदनीय हो जाता है। पूजा के आरंभ में भी हम पहले दीप जलाते हैं और बाद में दीप पूजन होता है। दीप ज्योति को हम नमस्कार करते हैं, उसे पूजते हैं। उसको परब्रह्म रूप माना गया है। कर्म साक्षी के रूप में हम दीप को आरंभ में जलाते हैं और प्रगट दीप की हम पूजा करते हैं। ज्ञान भी भगवान का ही स्वरूप है। ज्ञान हमारा निजरूप है, हमारा स्वरूप है। और वह कभी अभाव में नहीं हो सकता। इसलिए ज्ञान सद्स्तु है।

अज्ञान को वेदांत ने सद् और असद् दोनों रूपों में माना है क्योंकि अज्ञान ज्ञान को ढंकता है, आच्छादित करता है इसलिए वह असद् वस्तु ही है। केवल सद्वस्तु (noble thing) होती तो उसका नाश नहीं हो सकता। लेकिन अज्ञान का नाश संभव है। इसलिए अज्ञान असद् वस्तु (untrue thing) है। और यह ज्ञान अज्ञान से ढंका होता है। उस ज्ञान को प्रगट करना है। यह ज्ञान किस प्रकार से ढंका है? जिस प्रकार धूल से दर्पण ढंका हुआ है। ज्ञान न होने को अज्ञान नहीं कहा जाता। ऐसा कभी नहीं होता कि ज्ञान न हो। लेकिन वह अज्ञानता के आवरण से ढंका होता है।

जिस प्रकार धूएं से अग्नि ढंकी हुई है। उसी तरह ज्ञान भी ढंका होता है। ध्यान देना, अप्रगट से ही धुंआ पैदा होता है। अग्नि को प्रज्वलित कर दिया जाए तो धुआं समाप्त हो जाता है। यह धुआं है वासना। अप्रगट ज्ञान से ही वासना का धुआं प्रगट होता है। मनुष्य पाप करता है और पाप के कारण उसका पतन होता है। पाप क्यों करता है? वासना के कारण। यदि किसी प्रकार की वासना व्यक्ति के भीतर न रहे तो पाप नहीं हो सकता। पाप का कारण है वासना। और वासना का कारण क्या है? अज्ञान। यह अज्ञान कैसे मिटेगा? ज्ञान के प्रगट करने से। इसलिए ज्ञानी से कभी पाप हो ही नहीं सकता। क्योंकि जिसके भीतर ज्ञान प्रगट है, उसके जीवन में वासना लेशमात्र भी नहीं। यही कारण है कि वह पाप कर ही नहीं सकता। इसलिए कहा गया है, जहां ज्ञान है, वहां प्रकाश है।

प्रस्तुति : सुभाष चन्द्र शर्मा

वायनाड से क्यों लड़ रही हैं प्रियंका

नरेंद्र नाथ

17 जून को जब कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे ने रायबरेली और वायनाड की लोकसभा सीटों को लेकर फैसलों की घोषणा की, उस दौरान पत्रकारों से बातचीत में प्रियंका गांधी वाड्रा ने कहा कि वह वायनाड के लोगों को राहुल गांधी की कमी महसूस नहीं होने देंगी। हो सकता है उस दौरान प्रियंका की आंखों के सामने 1999 का वह दिन आ गया हो, जब उनकी मां सोनिया गांधी चुनावी राजनीति में एंट्री कर रही थीं। कर्नाटक की बेल्लारी सीट से नामांकन भरते हुए सोनिया गांधी ने पत्रकारों से कहा भी था कि 'बेल्लारी से चुनाव लड़ रही हूं, दक्षिण भारत हमेशा मेरी सास को प्रिय रहा है।' अब उसी भूमिका में प्रियंका हैं, वह दक्षिण के एक छोर वायनाड से चुनावी लड़ेंगी।

हालांकि इस फैसले के पीछे का संदेश महज भावनात्मक नहीं, व्यावहारिक भी है। कांग्रेस के इस फैसले में दो संकेत जाहिर होते हैं। उत्तर भारत के हार्टलैंड में राहुल गांधी की मौजूदगी से कांग्रेस अपनी खोई जमीन फिर से पाने की कोशिश में जुटेगी तो दक्षिण में प्रियंका पार्टी की संभावनाओं को मजबूत करेंगी।

विशुद्ध राजनीति
कसौटी

BJP के लिए दक्षिण दूर है

राहुल गांधी ने वायनाड सीट छोड़ते हुए कहा था कि वहां से उनका एक इमोशनल रिश्ता है। 2019 लोकसभा चुनाव में अमेठी से हारने के बाद वायनाड के लोगों ने उन्हें लोकसभा भेजा था। उस चुनाव में उनकी उम्मीदवारी को कांग्रेस की अगुआई वाले UDF की क्लीन स्वीप जैसे प्रदर्शन से भी जोड़ा जाता रहा है। इस बार भी इस फ्रंट ने 20 में से 18 सीटें जीतीं हैं। दूसरी ओर BJP की साउथ पर पूरी तरह से फोकस करने की रणनीति उसके लिए कारगर साबित नहीं हो पाई। पीएम मोदी ने तमिलनाडु जैसे राज्यों में बहुत जोर लगाया, लेकिन BJP का राहतभरा प्रदर्शन सिर्फ तेलंगाना और आंध्र प्रदेश में दिखा।

कांग्रेस यह बात पहले से जानती थी कि दक्षिण में मेहनत उसके लिए वे नतीजे ला सकती है, जो उत्तर भारत में संभव नहीं हो पा रहे। इसलिए चुनाव से पहले ही कांग्रेस का ध्यान दक्षिण पर टिक गया था। उसकी वजह भी है, कांग्रेस पिछली बार देश भर में कुल 423 सीटों पर लड़ी थी, जिनमें से 52 सीटें उसने जीती थीं। इनमें आधी से ज्यादा (30) सीटें साउथ से आई थीं। इस बार कांग्रेस ने दक्षिण की 130 सीटों में 94 पर उम्मीदवार उतारे और इनमें से 42 पर जीत हासिल की। तेलंगाना में कांग्रेस को 8 सीटें मिली हैं, जो कि पिछली बार से पांच ज्यादा है। कर्नाटक में सरकार चला रही पार्टी को 2019 के चुनाव में मिली एक सीट के मुकाबले इस बार 9 सीटें मिली हैं। हालांकि आंध्र प्रदेश में लोकसभा और विधानसभा चुनावों में कांग्रेस का प्रदर्शन निराशाजनक रहा। इसे लेकर पार्टी हाईकमान के लेवल पर चिंता भी जाहिर की गई है।

एक लंबे अर्से से राजनीति में सक्रिय प्रियंका गांधी का पहला चुनावी मैदान केरल का वायनाड लोकसभा क्षेत्र होगा। वायनाड के लोगों के लिए प्रियंका नया चेहरा नहीं हैं। वहां चुनाव प्रचार के दौरान उन्होंने राहुल गांधी के लिए कई रैलियां की थीं। केरल में 2 साल बाद विधानसभा चुनाव हैं, सीएम विजयन के खिलाफ एंटी इनकंबेंसी के माहौल को कांग्रेस अपने पक्ष में करने की कोशिश करेगी ही। लेकिन वहां कांग्रेस के लिए बड़ी चुनौती BJP के बढ़ते आधार को रोकना है। BJP का पैटर्न है कि वह एक सीट से संघमारी करती है और फिर हाथ-पैर फैलाती जाती है। इसलिए भी जरूरी है कि कांग्रेस वहां मजबूती के साथ खड़ी हो जाए। प्रियंका का वायनाड से चुना जाना इस रणनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हो सकता है।

नया नहीं है कांग्रेस का साउथ कनेक्शन

वैसे दक्षिण और गांधी परिवार का कनेक्शन नया नहीं। आपातकाल के बाद चिकमंगलूर सीट का उपचुनाव इंदिरा गांधी के राजनीतिक करियर के लिहाज से खासा अहम साबित हुआ था। 'एक शेरनी सौ लंगूर, चिकमंगलूर, चिकमंगलूर' का नारा और इतिहास की किताबों में दर्ज है। 1999 में कर्नाटक के बेल्लारी से सोनिया गांधी और सुषमा स्वराज की चुनावी भिड़ंत भी खासी चर्चित रही थी। कांग्रेस ने सोनिया गांधी के लिए इस सीट को एक सुरक्षित सीट की तरह तलाशा था। सुषमा स्वराज ने सोनिया गांधी को खासी टक्कर भी दी थी लेकिन देश की बेटी और स्वदेशी बहू के नारे की गूंज के बीच सोनिया जीत गई थीं।

सोनिया ने अमेठी को बरकरार रखने के लिए बेल्लारी सीट छोड़ दी, लेकिन सुरक्षित सीट के लिए दक्षिण पर भरोसा कायम रहा। देखा जाए तो दक्षिण ने कांग्रेस पार्टी को कभी निराश नहीं किया है। प्रियंका की उम्मीदवारी कांग्रेस की ओर से यह संकेत देने की कोशिश है कि दक्षिण पर उसका विश्वास बना हुआ है।

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

विकास की नई राह

24 जून का लेख 'क्या आंध्र में सिंगापुर का सपना सच होगा' पढ़ा। चंद्रबाबू नायडू के राज्य की सत्ता में वापस आने और केंद्र की सत्ता में साझेदार होने से अमरावती को विकास की राह पर ले जाने का एक सुनहरा अवसर मिला है। नायडू का ड्रीम प्रॉजेक्ट है, अमरावती को सिंगापुर की तरह निखारना। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भी राजनीति के साथ-साथ दूरगामी परियोजनाओं को आगे बढ़ाने में कोई चूक नहीं करते। वह जानते हैं कि यदि अमरावती को सिंगापुर की तर्ज पर विकसित कर दिया जाए तो यह देश की इकॉनमी के लिए बहुत अच्छा होगा। इससे पूरे प्रदेश के लोगों के लिए रोजगार के असंख्य मौके बनेंगे।

विभूति बुपक्या, ईमेल से

जिम्मेदार हो उम्मीदवार

18 जून को 'खाली पीली' कॉलम में 'सिकंदर का क्वालिटी नई देखने का भिड़ू' शीर्षक से प्रकाशित लेख पढ़ा। खाली पीली लेखक ने बिलकुल सही कहा है, जो चुनाव जीतता है, वही सिकंदर होता है। लेकिन जनता को क्वॉलिटी के साथ समझौता नहीं करना चाहिए। यहां ध्यान देने वाली बात है कि हमें ऐसे उम्मीदवार को चुनने के लिए आगे बढ़ना होगा जो क्षेत्र की समस्याओं से वाकिफ हो, जो जनता के करीब हो और अपनी जिम्मेदारियों को स्वीकार करना जानता हो।

पैथर तोमर, किशन गंज

लापरवाही से बचें

उत्तर प्रदेश के प्रयागराज में एक सड़क हादसे में पांच लोगों की मौत हो गई। दुर्घटना के शिकार एक ही परिवार के पांच सदस्य हुए जो एक ही बाइक पर जा रहे थे। दिल दहला देने वाली इस घटना से हमें सबक लेना चाहिए। सड़क पर जोखिम मोल लेते हुए चलने से हर हाल में बचने की जरूरत है। नियम-कानून बने हैं हमारी सुरक्षा के लिए। हम कई बार जानबूझ कर गलतियां कर बैठते हैं, जिसकी कीमत न सिर्फ हमारी बल्कि दूसरों की भी जान हो सकती है।

पूनम रस्तोगी, पंजाबी बाग

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

ईटानगर में बादल फटा, बाढ़ जैसे हालात – एक खबर
– यहां तो गर्मी से धरती फटी जा रही है!

प्रीति गोयल

नभ टाइम्स, ए. 2/10/21ए एसोसिएट्स एडिशन, निर्दिष्ट अनुसार के लिए संपादन व प्रकाशन एडिशन एडिटर: जीतेंद्रिय। व्यवस्थापकीय हैड, कॉर्पोरेट एवं प्रकाशन निर्देशक के लिए राजीव पराठा द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, नोएडा तथा, **अंतर्राष्ट्रीय प्रेस कार्यालयों:** और पर्दा नंबर 7-8, सेक्टर 30-11, इंडस्ट्रीज एरिया गोलाना तालाबीरा, चंडीगढ़, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 2330000 फैक्स: 2340340, पंजीकृत कार्यालय : टाइम्स बिल्डिंग, ऐरा, पुस्तक-400001। निकट रेल मुख्य : 1 ई. डी. मोदी। मेरा ई मुख्य पृष्ठ: संपादक से प्रतिक्रिया : नेतृत्व ई. मेल : प्रतिक्रिया : नेतृत्व ई.मेल
संपादक (दिल्ली संस्करण) : आशीष पांडे (26 अंक में संपादित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु वे आत्मा, एक के समस्त समाचारों)

भारत-बांग्लादेश संबंध

नए समझौते

भारत और बांग्लादेश को नए समझौतों से लाभ होगा। नई दिल्ली और ढाका ने अनेक समग्र प्रकृति के समझौतों पर हस्ताक्षर किए हैं और इनमें समग्र आर्थिक साझेदारी समझौते-'सीपा' पर वार्ता शुरू करना शामिल है। इन समझौतों में बांग्लादेशियों के लिए चिकित्सा ई-वीसा सुविधा, तीस्ता जल-साझा पर चर्चा के लिए एक तकनीकी टीम बांग्लादेश भेजना तथा रंगपुर में सहायक उच्चायुक्त कार्यालय खोलना शामिल हैं। इन समझौतों में नई ट्रेन व बस सेवायें, बांग्लादेश को भारतीय ग्रिड से 40 मेगावाट बिजली सप्लाई, सिराजगंज में 'इन्लैंड कंटेनर डिपो' तथा बांग्लादेशी पुलिस अधिकारियों के भारत में प्रशिक्षण हेतु 350 सीटें आबंटित करना भी शामिल हैं। भारत मुख्यत: चार आयामों में बांग्लादेश के साथ रणनीतिक संबंधों को बढ़ावा दे रहा है। इनमें देश की आर्थिक बेहतरी, बांग्लादेशियों की स्वास्थ्य आवश्यकताओं में सहायता, क्षेत्र में भारत की उपस्थिति मजबूत करना तथा बांग्लादेश में चीन के बढ़ते प्रभाव का मुकाबला करना शामिल हैं। 2008 से सत्ता में विद्यमान तथा देश के आर्थिक व सामाजिक विकास के लिए हार्दिक प्रशंसा की पात्र रही बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना अब देश में महामारी-पश्चात सुधार में कठिनाइयां अनुभव कर रही हैं। उनकी योजना द्विपक्षीय संबंधों के माध्यम से इन मुद्दों को संबोधित करना है और वे नई दिल्ली के साथ संबंध और बेहतर बनाना चाहती हैं। नई दिल्ली स्वाभाविक रूप से उनको सकारात्मक जवाब दे रही है। इस बार बीजिंग की बढ़ती 'छाया' को देखते हुए इन रिश्तों में और ज्यादा गर्माहट प्रदर्शित की गई। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी तथा बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना ने

'भविष्योन्मुखी दृष्टिकोण' से साझेदारी को गहरा किया है तथा सहयोग में व्यापक स्तर पर सुधार किए हैं। शेख हसीना 21 जून से दो दिन की राजकीय यात्रा पर भारत आई थीं। भारत का बांग्लादेश के इतिहास में विशेष स्थान है क्योंकि 1971 के मुक्ति संग्राम में उसने प्रमुख भूमिका निभाई थी। लेकिन दोनों देशों के बीच 1970 के दशक मध्य में सैनिक शासन के दौरान वहां भड़क रही भारत-विरोधी भावनाओं के कारण संबंधों में तनाव आ गया था। हालांकि, साझा इतिहास ने मजबूत संबंध बनाने में सहायता की तथा 2014 से मोदी के शासनकाल में द्विपक्षीय संबंधों को और गति मिली। इसके पहले 1996 में पहली बार शेख हसीना के प्रधानमंत्री बनने पर द्विपक्षीय संबंधों में महत्वपूर्ण बदलाव आया था। इसके बाद से उनमें लगातार सुधार हुआ है। 2019 से दोनों नेताओं की दस अवसरों पर मुलाकात हुई है जिससे उल्लेखनीय परिवर्तनों तथा संबंधों में मजबूती का नया युग शुरू हुआ है। जनवरी, 2024 में लगातार अपना चौथा कार्यकाल शुरू करने वाली प्रधानमंत्री शेख हसीना 9 जून, 2024 को अन्य 6 विश्व नेताओं के साथ प्रधानमंत्री मोदी के शपथ ग्रहण समारोह में शामिल हुई थीं। हालांकि, द्विपक्षीय संबंधों में कुछ चुनौतियां बनी हुई हैं जिनमें सीमा प्रबंधन, अवैध आप्रवासी, राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर, रोहिंग्या और नदी जल साझा शामिल हैं। इनके समाधान हेतु निरंतर संवाद जरूरी है। बांग्लादेश ने उत्पीड़ित रोहिंग्याओं के लिए एक द्वीप दिया है, पर वह म्यांमार में इन अल्पसंख्यकों के पुनर्वास में भारत की सहायता चाहता है। मोदी-हसीना साझेदारी से भारत-बांग्लादेश संबंधों को और मजबूती मिलने की पूरी उम्मीद है। आशा है कि दोनों देश अपने बीच बची-खुची चुनौतियों को संबोधित करने में सफल होंगे। इससे परस्पर समृद्धि के लिए साझा व दूरगामी दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता मिलेगी।

आंध्र प्रदेश में नायडू की वापसी

दो दशक से अधिक समय से हाशिये पर रहने के बाद नायडू का उभार राज्य की राजनीति में बड़ा परिवर्तन है जिससे विकास पर पुन: ध्यान जाएगा।

कल्याणी शंकर
(लेखिका, वरिष्ठ पत्रकार हैं)

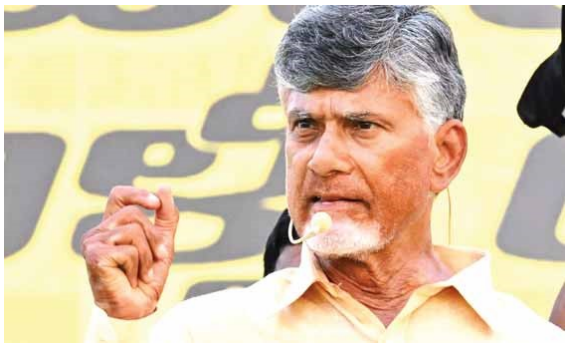

आंध्र प्रदेश में दो दशक से अधिक समय से हाशिये पर रहने के बाद चंद्रबाबू नायडू का उभार राज्य की राजनीति में बड़ा परिवर्तन है जिससे राज्य के विकास पर पुन: ध्यान केन्द्रित करने में सहायता मिलेगी। हाल ही में आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री पद पर नारा चंद्रबाबू नायडू का शपथ ग्रहण व्यक्तिगत रूप से नायडू की उपलब्धि के साथ ही उनकी पार्टी और भारतीय राजनीति के लिए महत्वपूर्ण परिवर्तनकारी घटना है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी तथा अन्य सर्वोच्च भाजपा नेताओं ने 74 वर्षीय नायडू के चौथी बार मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने के अवसर पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। इस प्रकार चंद्रबाबू नायडू की एक बार फिर राजनीति में शानदार वापसी हुई है। दो दशक से अधिक समय से राज्य और राष्ट्र की राजनीति में हाशिए पर रहने के बाद नायडू अब अपनी वर्तमान भूमिका से बहुत संतुष्ट हैं। इस प्रकार उन्होंने एक बार फिर सिद्ध कर दिया है कि राजनेता के तौर पर उनके महत्व को अनदेखा करने वालों ने भारी गलती की है। मुख्यमंत्री के रूप में विजेता चंद्रबाबू नायडू की वापसी के साथ ही उनकी पार्टी तेलगू देशम ने शानदार प्रदर्शन किया है। अब तेलगू देशम पार्टी वर्तमान राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन-राजग सरकार में दूसरे नंबर की सबसे बड़ी पार्टी है। इससे प्रदेश के साथ ही केन्द्र की सत्ता में महत्वपूर्ण परिवर्तन का संकेत मिला है। लगभग एक साल पहले नायडू के पूर्ववर्ती वाईएसआर कांग्रेस के जगन मोहन रेड्डी आराम से सत्ता में थे और उनको एक और कार्यकाल मिलने की पूरी उम्मीद थी। इसका कारण यह था कि उस समय विपक्ष विभाजित था। उस समय पवन कल्याण तेलगू देशम पार्टी-तेदेपा के साथ नहीं थे और भाजपा इस बात को लेकर दुविधा में थी कि तेदेपा को राजग गठबंधन में फिर शामिल किया जाए या नहीं। चंद्रबाबू नायडू पर भ्रष्टाचार के अनेक आरोप थे और तेदेपा कार्यकर्ता काफी हतोत्साहित थे।

नायडू की सत्ता में वापसी के पीछे अनेक कारण रहे हैं। जगन मोहन के खिलाफ सत्ता-विरोधी भावनाओं के साथ ही पवन कल्याण की जनसेना, भाजपा तथा तेदेपा की जातीय गणित ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। जगन ने राज्य में ढांचागत संरचना तथा कृषि की उपेक्षा की जिसके कारण लोगों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा और यह भी नायडू की वापसी का प्रमुख कारण बना। चंद्रबाबू नायडू बार-बार पराजित होकर फिर उभरने वाले नेता रहे हैं। उन्होंने अपने राजनीतिक कैरियर की शुरुआत 1978 में एक जूनियर मंत्री के रूप में की थी और इसके बाद वे तेलगू देशम पार्टी-तेदेपा के विभिन्न पदों पर रहे। वे अनेक बार आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री रहे और अपने कार्यकाल में उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण विकास योजनायें शुरू कीं। हालांकि, इनके कारण वे विवादों में भी घिरे रहे।

लेकिन इस पूरी उथलपुथल के बीच नायडू ने अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति तथा अदम्य भावना का परिचय दिया। नायडू ने घोषणा की थी कि 2024 का चुनाव उनका अंतिम चुनाव है। इस कदम से जहां वे अपने बेटे लोकेश को वारिस के रूप में विकसित करने में सफल रहे, वहीं मतदाताओं पर इसका भावनात्मक प्रभाव पड़ा। हालांकि, इस रणनीतिक निर्णय का आंध्र प्रदेश की राजनीति में नायडू परिवार के भविष्य पर काफी प्रभाव पड़ सकता है। पहले काफी समय तक चंद्रबाबू नायडू अपने ससुर और तेलगूदेशम पार्टी मुखिया एन.टी. रामाराव की छाया में रहे, पर अंतत: वे पार्टी के लिए अपरिहार्य बन गए। उन्होंने 'राष्ट्रीय मोर्चा' व 'संयुक्त मोर्चा' सरकारों के दौरान राष्ट्रीय राजनीति की महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की और उसमें अपना स्थान बनाया। उनकी पार्टी तेदेपा वीपी सिंह, देवगौड़ा, आई.के. गुजराल तथा बाद में अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली सरकारों का हिस्सा रही। इस प्रकार वे तथा उनकी पार्टी किसी के लिए अश्पृश्य नहीं थे। चंद्रबाबू नायडू तथा उनकी तेलगूदेशम पार्टी के विभिन्न केन्द्र सरकारों के साथ परिवर्तनशील संबंध रहे। लेकिन वर्तमान प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व वाली सरकार में उनकी सहभागिता विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मोदी सरकार को तेदेपा के समर्थन के साथ नायडू ऐसी स्थिति में हैं जहां वे आंध्र प्रदेश के हित में बातचीत और पैरवी कर लाभ प्राप्त कर सकते हैं। चंद्रबाबू नायडू देश के ऐसे पहले मुख्यमंत्री थे जो स्वयं को आंध्र प्रदेश का 'सीईओ' कहते थे। इस प्रकार प्रदेश में एक बार फिर सीईओ की वापसी हो गई है। मुख्यमंत्री के रूप में नायडू ने पहले 'टेक जायंट' बिल गेट्स के साथ बहुत अच्छे संबंध विकसित किए थे। उन्होंने हैदराबाद में निवेश के व्यापक अवसर खोले और इसे 'साइबराबाद' में बदल दिया। उन्होंने विश्व बैंक जैसी एजेंसियों से हैदराबाद में ढांचागत परियोजनाओं के लिए भारी मात्रा में सहायता ली और उसका समग्र विकास करने में सफल हुए। लेकिन गलती यह थी कि उन्होंने राज्य के अन्य भागों के विकास पर इतना ध्यान नहीं दिया।

मुख्यमंत्री के रूप में अपने चौथे कार्यकाल में नायडू के पास आंध्र प्रदेश को फिर से महत्व दिलाने का अवसर मिला है जिसे एक समय देश में 'चावल का कटोरा' कहा जाता था। नायडू की सर्वोच्च प्राथमिकता आंध्र प्रदेश के लिए अतिरिक्त धन जुटाना है जो राज्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा। आंध्र प्रदेश के विकास में नायडू के दृष्टिकोण में लंबित सिंचाई परियोजनाओं, जैसे 'पोलावरम परियोजना' को गति देना शामिल है ताकि राज्य के कृषि क्षेत्र को मजबूत किया जा सके। अपनी पार्टी के समर्थन से नायडू राज्य के संसाधनों को अधिकतम बढ़ा कर विकास को गति देना चाहते हैं। हाल ही में केन्द्र सरकार बनने के बाद मोदी कैबिनेट में जब उनकी पार्टी के केवल एक कैबिनेट तथा एक राज्य मंत्री मिलने पर जब नायडू से सवाल पूछा गया तो उन्होंने कहा, 'हम नरेन्द्र मोदी कैबिनेट की संरचना पर बात नहीं कर रहे हैं क्योंकि यह राज्य के हितों का मामला है।' इससे स्पष्ट है कि चंद्रबाबू नायडू आंध्र प्रदेश के लिए अपनी केन्द्र सरकार में सहभागिता का अधिकतम लाभ उठाना चाहते हैं। हालांकि, इस बात की उम्मीद है कि मोदी सरकार के अगले विस्तार में उनको मंत्रिमंडल में और स्थान मिलें। नायडू के समक्ष दूसरी महत्वपूर्ण चुनौती आंध्र प्रदेश की राजधानी 'अमरावती' का निर्माण है। उनके पूर्ववर्ती जगन मोहन रेड्डी ने अपने दो कार्यकाल के शासन में इस परियोजना पर रोक लगा दी थी। अब सत्ता में अपनी वापसी के बाद चंद्रबाबू नायडू अमरावती परियोजना पूरी करना चाहते हैं। इसके लिए वे केन्द्र सरकार पर दबाव भी डाल सकते हैं ताकि राजधानी का निर्माण हो सके। इसके साथ ही वे अनेक नई परियोजनायें तथा छ: कल्याणकारी योजनायें चलाना चाहते हैं। एक 'शोमैन' की तरह वे अमरावती परियोजना को एक 'आदर्श राजधानी' के रूप में पेश करना चाहेंगे। लेकिन वर्तमान समय में राज्य गंभीर आर्थिक संकट का सामना कर रहा है। राज्य में पैसे की भारी कमी है तथा उस पर कुल 14 लाख करोड़ रुपये का कर्ज है। इसमें विभिन्न स्रोतों से लिया गया 12 लाख करोड़ कर्ज तथा 1.5 लाख करोड़ का बकाया भुगतान शामिल है। राज्य पर इस भारी वित्तीय बोझ का कारण नायडू के पूर्ववर्ती जगन मोहन रेड्डी सरकार की अनेक काल्पनिक योजनायें हैं जो जमीन पर नहीं उतर सकीं। उन्होंने हास्यास्पद रूप से राज्य में तीन राजधानियों की कल्पना की थी, जिसमें एक न्यायिक, एक आर्थिक व एक प्रशासनिक राजधानी होती। इस अव्यावहारिक कल्पना से राज्य का विकास प्रभावित हुआ तथा उस पर वित्तीय बोझ बढ़ा।

अपने चार दशक के राजनीतिक कैरियर में 74 वर्षीय नायडू अनेक उतार-चढ़ाव से गुजरे। अपने पहले और दूसरे कार्यकाल में वे समय से बहुत आगे थे। उन्होंने स्वयं को एक भविष्योन्मुखी सोच वाले, तकनीक-समर्थक तथा टेक-सेवी मुख्यमंत्री के रूप में पेश किया। वर्तमान समय में नायडू के लिए अच्छा अवसर है। वे एक प्रकार से 'किंगमेकर' हैं और मोदी सरकार में सत्ता का साझा कर रहे हैं। राज्य विधानसभा में उनके सामने कोई विपक्ष नहीं है क्योंकि वाईएसआरसीपी केवल 11 सीटों तक सिमट गई है। तेदेपा को मुस्लिम आरक्षण का मुद्दा सुलझाना है क्योंकि यह भाजपा से उनके टकराव का कारण बन सकता है। फिलहाल मोदी से नायडू के संबंध बहुत अच्छे हैं। इसके साथ ही तेदेपा को नायडू के खिलाफ भ्रष्टाचार मामलों से निपटना होगा क्योंकि वे जमानत पर हैं। चौथे कार्यकाल में नायडू का व्यवहार उनके तथा उनके बेटे लोकेश के भविष्य के लिए महत्वपूर्ण होगा।

पढ़ने का आनन्द

> पढ़ने की आदत के अनेक लाभ हैं। इनमें बौद्धिक प्रेरणा व समग्र बेहतरी शामिल हैं।

शाइनी शर्मा
(लेखिका, शिक्षक हैं)

पढ़ना उन लोगों के लिए जरूरी है जो सामान्य स्थिति से ऊपर उठना चाहते हैं। पढ़ने की आदत के जीवन पर अनेक सकारात्मक प्रभाव होते हैं जिनमें बौद्धिक प्रेरणा से लेकर भावनात्मक बेहतरी तक शामिल हैं। नियमित रूप से पढ़ने के लिए समय निकालना अपने लिए लाभदायक है, फिर चाहे यह भौतिक पुस्तकों से हो या ई-पुस्तकों से। बरसात और ठंडक के समय गर्म कंबल में बैठ कर और एक कप काफी हाथ में लेकर अपनी पसंदीदा पुस्तक पढ़ने से अधिक आनन्द और कुछ नहीं हो सकता है।

नई किताबों की खुशबू किसी पुराने प्रेम की तरह है जैसे पुराने फूल, फोटो और पत्र बुकमार्क की तरह छिपाए जा सकते हैं और हमेशा आनन्ददायक उपहार की तरह होते हैं। तकनीकी प्रगति से उथलपुथल वाली दुनिया में कभी-कभी साहित्य से संपर्क एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का कारण बन सकता है। परंपरागत रूप से किताब पढ़ने के तरीके का आजकल डिजिटल व आडियो समकक्षों से मुकाबला हो रहा है। आज जेब में ऐसी पुस्तक लाइब्रेरी रखना आसान हो गया है जहां लोग अपनी सुविधानुसार उनको देख सकते हैं। इससे किताबों की दूकान या पुस्तकालय तक जाने के झंझट से भी मुक्ति मिलती है और कोई भी अपनी मनपसंद पुस्तक डिजिटल रूप से चुन सकता है।

भौतिक पुस्तकों की तुलना में ई-बुक्स पर्यावरण हितैषी पहुंच प्रकट करती हैं क्योंकि इससे कागज की मांग कम होती है। इससे पेड़ों से लुगदी की मांग घटती है तथा उपभोक्ताओं तक किताबें पहुंचाने के लिए परिवहन व प्रिंटिंग सुविधाओं की जरूरत भी नहीं रहती है। भौतिक पुस्तकों के उत्पादन में अनेक प्रकार की सामग्री और प्रक्रियाओं की जरूरत होती है जिससे कचरा और प्रदूषण होता है। ई-बुक्स के लिए ऐसी विनिर्माण प्रक्रियाओं की जरूरत नहीं होती

है और इस प्रकार इनके उत्पादन और कचरा निस्तारण में कमी से पर्यावरण फुटप्रिंट घटता है।

हालांकि, ई-बुक्स के लिए एलेक्ट्रानिक उपकरणों की जरूरत होती है जो ऊर्जा का उपभोग करते हैं, लेकिन ऊर्जा-सक्षम उपकरणों के प्रयोग, चार्जिंग के लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के प्रयोग तथा दीर्घजीविता व भौतिक पुस्तकों की तुलना में एलेक्ट्रानिक उपकरणों के संभावित पुन: प्रयोग से पर्यावरण प्रभाव कम किया जा सकता है। लेकिन जब ये ई-बुक्स टेबलेट या फोन जैसे उपकरणों के माध्यम से मिलती हैं तो ध्यान भटकाने का बड़ा स्रोत भी साथ आता है और गंभीरता से पढ़ने का समय घटता है। इसके साथ ही ऐसे उपकरण मल्टीमीडिया संवर्धन जैसे वीडियो या ईटरएक्टिव तत्व प्रदान करते हैं जिससे पढ़ने के अनुभव में व्यवधान पड़ता है। हालांकि, यह व्यक्तिगत अनुभव पर निर्भर है। कुछ लोगों को भौतिक पुस्तकों का स्पर्श ही पसंद आता है।

अनेक शोध एवं अध्ययन ई-बुक्स पसंद में विभिन्न आयामों के अंत: संबंध स्पष्ट होते हैं। भौतिक पुस्तकें बेहतर समझदारी, उसे बनाए रखने तथा ज्यादा आरामदेह पाठन अनुभव देती हैं, जबकि ई-बुक्स सुविधाजनक, लाने ले जाने में आसान तथा लागत प्रभावी होती हैं। इस प्रकार पसंद का अवसर मुख्यत: विशिष्ट पाठक की आवश्यकताओं पर निर्भर करता है। एक पुस्तक में डूबने की तुलना में सोशल मीडिया की ई-ब्राउजिंग से छोटी-छोटी पोस्टों या लेखों का आनन्द उठाया जा सकता है, लेकिन अंतत: इनसे टिकाऊ व गहन अध्ययन की आदत कमजोर पड़ती है। तत्काल आनन्द व सोशल मीडिया का निरंतर अनोखापन पुस्तकें पढ़ने की तुलनात्मक रूप से कम आकर्षक तथा कम लाभकारी बनाता है।

पढ़ने का प्रयास करने के समय सोशल मीडिया चेक करने की प्रवृत्ति संकेन्द्रण तथा पाठन अनुभव में बाधा डालती है। ई-बुक्स बनाम भौतिक पुस्तकों के पर्यावरणीय प्रभाव में प्रयोग किए जा रहे उपकरणों की ऊर्जा दक्षता, बिजली के स्रोत तथा उपकरणों के प्रयोग की बारंबारता महत्वपूर्ण है। लेकिन इसके साथ ही प्रयोगकर्ता भौतिक पुस्तकों के विशिष्ट लाभों का वर्णन करते हैं। इसलिए पढ़ने की आदतों में संतुलन बनाए रखना जरूरी है। वैसे कुल मिला कर कहा जाए तो पुस्तकें पढ़ने के माध्यम से सीखने, विकास करने तथा आराम करने का कोई विकल्प नहीं है।

आप की बात

संसद का प्रथम सत्र

दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र भारत में 18 वीं संसद का प्रथम सत्र नवनिर्मित संसद भवन में 24 जून को आरंभ हुआ। सभी भारतीयों को गौरवान्वित होना चाहिए कि हमारा लोकतंत्र लगातार मजबूत हुआ है और संसदीय प्रणाली के माध्यम से भारत में राजकाज सुचारू रूप से चल रहा है। भारत के 543 सांसदों से देश यह जरूर अपेक्षा करता है कि वे अपने क्षेत्र के मुद्दों को जरूर उठाएं, लेकिन जब बात राष्ट्र की सुरक्षा एवम राष्ट्र के मान-सम्मान की आए तो सभी सांसदों को एकजुटता का परिचय देते हुए पूरे विश्व में एकरूपता और एकजुटता का संदेश जरूर प्रसारित करना चाहिए। देश की सबसे बड़ी पंचायत प्रगति का आधार है और इसके कंधे पर भारत की सुरक्षा और संप्रभुता सुनिश्चित करने की भी जिम्मेदारी है। उम्मीद है कि सभी सांसद मर्यादित आचरण करते हुए करते हुए मां भारती की सेवा करेंगे। केंद्र सरकार से यह भी अपेक्षा करते हैं कि कानून-व्यवस्था एवं योजनाओं को लागू करते समय निष्पक्षता का परिचय दें और क्षेत्रवाद से उठकर पूरे देश के सभी लोकसभा क्षेत्रों में प्रगति सुनिश्चित करे। विपक्षी दलों की भी जिम्मेदारी है कि वे संकुचित राजनीतिक व चुनावी लक्ष्यों से ऊपर उठ कर रचनाशील विपक्ष की भूमिका निभा कर सम्मान अर्जित करें।

– **वीरेंद्र कुमार जाटव,** दिल्ली

आम की खूबियां

आम की खूबियों का जितना वर्णन किया जाए उतना कम है। शायद ही कोई फल ऐसा होगा जिसमें हजारों स्वाद हैं, कोई खट्टा मीठा रसीला खुशबूदार, कोई इतना बड़ा कि 1 किलो का एक आम तो कोई इतना छोटा कि 1 किलो में 20 चढ़ जांए। आम के दीवाने पूरी दुनिया में है मगर भारत में इसकी दीवानगी सबसे ज्यादा है। क्वालिटी के हिसाब से इनके दामों में जमीन आसमान का फर्क है। अधिकतम 6 लख रुपए किलो से लेकर 20 रुपये किलो तक आम आपको मिल सकते हैं। उत्पादक क्षेत्रों से लेकर पूरे देश और विदेशों में सब के पास आम जाता है। चाहें तो आम पर एक ग्रंथ लिखा जा सकता है। मगर उसे मोटे ग्रंथ को पढ़ने के बाद आम के बारे में जो ज्ञान प्राप्त होगा वह ज्ञान आपको एक आम खाने मात्र से प्राप्त हो जाएगा। कोल्ड स्टोरेज की बदौलत इसे ठंडा कर 12 महीने उपलब्ध करवाया जाता है। वहीं कोल्ड ड्रिंक में रसायनों, रंगो और शक्कर की सहायता से ही आम का स्वाद देने की कोशिश की जाती है। आम के अचार, मुरब्बा, आम पापड़, स्लाइस, कैंडी के रूप में भी इसका 12 महीने स्वाद लिया जा सकता है। भारत का राष्ट्रीय फल होने के साथ इसे फलों का राजा भी कहा जाता है।

– **सुभाष बुडावन वाला,** रतलाम

रूस-यूक्रेन युद्ध

रूसी रक्षा मंत्रालय ने कहा कि वाशिंगटन और कीव शांतिपूर्ण निवासियों पर जानबूझ कर किए मिसाइल हमले के जिम्मेदार हैं। उसका आरोप है कि अमेरिका द्वारा दी गई कुछ मिसाइलों का इस्तेमाल किया गया। इसमें तीन बच्चों सहित पाँच लोगों की मौत हो गई और 120 से ज्यादा लोग घायल हो गए। लेकिन यह तथ्य अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि रूस भी यूक्रेन पर रोज हमला कर उसके स्कूलों, अस्पतालों, बाजारों, आवास स्थलों, आधारभूत संरचनाओं, बिजली उत्पादन केंद्रों को निशाना बनाता है जिसका सबसे ज्यादा नुकसान निरपराधी यूक्रेनी नागरिकों, बच्चों, महिलाओं और वृद्धों को उठाना पड़ रहा है। पिछले माह जर्मनी और अमेरिका ने यूक्रेन को छूट दे दी कि वो उनके द्वारा सप्लाई हथियारों का प्रयोग कर रूस के भीतर तक आक्रमण कर सकता है। रूस को इस आक्रमण के लिए खुलेआम चीन और उत्तर कोरिया जैसे तानाशाही देशों से मदद मिल रही है। ब्रिटेन के एक नेता ने यह कह कर हंगामा खड़ा कर दिया है कि अमेरिका ने हो रूस को यूक्रेन पर हमले के लिए उकसाया है। इस प्रकार रूस-यूक्रेन युद्ध में कोई दूध का धुला नहीं है, लेकिन इसका खामियाजा रूस और यूक्रेन की जनता भुगत रही है। यह युद्ध अब समाप्त होना ही चाहिए।

जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर

ट्रेनों का संचालन

वाराणसी से दिल्ली जा रही वन्दे भारत के इंजिन में खराबी के चलते वो करीब एक घंटे यूपी में इटावा के पास भरथला में खड़ी रही। बताते हैं किसी पशु के टकराने से उसके इंजिन में खराबी आ गई थी जिसे रेलवे के तकनीकी स्टाफ ने ठीक कर ट्रैन को रवाना किया। पशु के टकराने से हुई खराबी एक अनहोनी हो सकती है, किन्तु पहले भी कई बार देखा गया है कि वन्दे भारत ट्रेनों में तकनीकी खराबी आती रही है और वो चलते-चलते रास्ते में रोकी गई। नई ट्रेन, नई बोगियां और नए इंजिन आदि होने के बावजूद इन ट्रेनों में बार-बार तकनीकी खराबी आना ठीक नहीं कहा जा सकता है। ट्रेनों के संचालन में तकनीक को उत्कृष्टतम बनाने के साथ रेलवे सुरक्षा और संरक्षा में समुचित संख्या में कर्मचारियों की भर्ती की जानी चाहिए। इस दिशा में देर से ही सही कुछ कदम उठाए जा रहे हैं। ट्रेनों के संचालन में मानवीय गलतियों के कारण पिछले दिनों कई दुर्घटनायें हुई हैं। इसलिए मानवीय श्रमशक्ति तथा तकनीकी स्टाफ की कमी की भरपाई केवल तकनीकों के प्रयोग से संभव नहीं लगती है। रेलों की सुरक्षा पर भी ध्यान देना चाहिए।

– **शकुंतला महेश नेनावा,** इंदौर

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

झूठ बोलने वाले लोग वह तेजाब हैं, जो सार्वजनिक जीवन और लोकतंत्र की बुनियाद को नष्ट कर देते हैं। -विलफोर्ड ग्रुलो

छत्तीसगढ़ में सरकार की तरफ से चलाए जा रहे नक्सल उन्मूलन अभियान से हताश नक्सलियों ने अब सुकमा में जो हरकत दिखाई है, वह उनकी बौखलाहट को ही दर्शाती है। पर चिंता सिर्फ हिंसा को लेकर नहीं है, बल्कि वे नकली नोट छापकर अर्थव्यवस्था को भी चोट पहुंचा रहे हैं।

हताशा के हमले

छत्तीसगढ़ में सरकार की तरफ से चलाए जा रहे नक्सल उन्मूलन अभियान से हताश नक्सलियों ने बीते रविवार को एक बार फिर दुस्साहस दिखाते हुए सुकमा जिले में आईईडी के जरिये जिस तरह सुरक्षाबलों के ट्रक को उड़ाया, वह उनकी बौखलाहट को ही दर्शाता है।

उल्लेखनीय है कि ट्रक में सवार जवान नवनिर्मित टेकलगुडेम पुलिस शिविर में तैनात सुरक्षा बलों के लिए राशन सामग्री ले जा रहे थे। दोपहर करीब तीन बजे जब ट्रक तिमापुरम गांव पहुंचा ही था कि माओवादियों ने आईईडी विस्फोट कर दिया, जिसमें दो कोबरा जवानों का बलिदान हुआ। बमुश्किल दस दिन पहले छत्तीसगढ़ व महाराष्ट्र की सीमा पर नारायणपुर के अबूझमाड़ में आठ नक्सली मारे गए थे, तो यहीं पर अप्रैल में भी दस नक्सली ढेर किए गए थे। उल्लेखनीय है कि सिल्गेर और टेकलगुडेम के बीच रविवार का हमला ऐसे समय में हुआ है, जब नवनिर्मित पुलिस शिविरों के बीच सड़क निर्माण का कार्य चल रहा है। ध्यान देने वाली बात यह भी है कि टेकलगुडेम पुलिस शिविर उस क्षेत्र में है, जो कभी प्रतिबंधित भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) की सशस्त्र शाखा पीपुल्स लिबरेशन गुरिल्ला आर्मी (पीएलजीए) की पहली बटालियन का गढ़ था। गौरतलब है कि यह वही टेकलगुडेम का जंगल है, जहां अप्रैल, 2021 में नक्सलियों से हुई घातक मुठभेड़ में 23 जवानों का बलिदान हुआ था, लेकिन इस वर्ष जनवरी में इस क्षेत्र को सुरक्षाबलों ने अपने नियंत्रण में ले लिया और सिल्गेर कैंप से करीब पांच किलोमीटर दूर टेकलगुडेम में पुलिस शिविर लगाया। कुछ दिन बाद जब टेकलगुडेम से करीब छह किलोमीटर आगे पुआरटा गांव में एक और पुलिस शिविर स्थापित किया गया, जो वाकई एक उपलब्धि थी, क्योंकि नक्सली गुट पीएलजीए के कई बड़े नेता इसी पुआरटा गांव से ताल्लुक रखते हैं। जाहिर है कि पिछले छह महीनों में सुरक्षाबलों ने योजनाबद्ध ढंग से अपनी सक्रियता बढ़ाई है, हालांकि इस दौरान करीब 141 नक्सली मारे भी गए हैं, जो नक्सलियों को खल तो रहा ही है, नवनिर्मित पुलिस शिविर

व सड़कों के लगातार निर्माण से उनकी भूनाहट ऐसे कायरतापूर्ण हमलों के रूप में सामने आ रही है। सुकमा में जिस तरह के प्रमाण मिले हैं, उन्हें देखते हुए ज्यादा परेशान करने वाली बात यह है कि नक्सली सिर्फ हिंसा तक सीमित नहीं, बल्कि जाली नोट छाप कर और उन्हें स्थानीय बाजारों में चलाकर स्थानीय व देश की अर्थव्यवस्था के लिए भी संकट पैदा कर रहे हैं। नक्सलवाद दशकों पुरानी समस्या है, जाहिर है, जिसके समाधान की रणनीति भी एकसूत्री नहीं हो सकती। नक्सली हिंसा का जवाब देना जरूरी है, लेकिन हाल-फिलहाल के उसके हमलों को देखते हुए सतर्कता भी उतनी ही जरूरी है।

अलग मोड़ पर दक्षिण की सियासत

दक्षिण के कई सांसदों को लगता है कि मोदी सरकार उत्तर भारतीयों के लिए है। इस तरह का नैरेटिव कई नेता प्रचारित कर रहे हैं, जो खतरनाक है। साथ ही, हिंदुत्व के विकास को रोकने के लिए युवाओं में बदले की भावना के साथ द्रविड़ विचारधारा को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिससे तमिलनाडु में सामाजिक विभाजन चरम पर है।

दक्षिण भारत की राजनीति एक अलग मोड़ ले रही है। क्या इसके फलस्वरूप मोदी सरकार को दक्षिण में आक्रामक रुख अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ेगा? जिस तरह के संकेत मिल रहे हैं, उससे लगता है कि आंध्र प्रदेश से प्रतिस्पर्धा करते हुए माकपा, द्रमुक और कांग्रेस केरल एवं तमिलनाडु के लिए विशेष वित्तीय दर्जे की मांग कर सकती हैं। चूंकि तेलुगु देशम पार्टी (तेदेपा) राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) का हिस्सा बन गई है, इसलिए हो सकता है कि उसकी मांग को केंद्र सरकार से समर्थन मिल जाए। इस तरह का विशेष वित्तीय दर्जा उत्तरी राज्य, खासकर बिहार भी मांग रहा है। इसलिए केंद्र सरकार को सोच-समझकर कदम उठाना होगा।

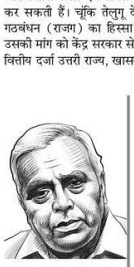

आर राजगोपालन
वरिष्ठ पत्रकार

तमिलनाडु में द्रमुक सरकार को फिलहाल सत्ता विरोधी लहर का सामना करना पड़ रहा है, क्योंकि अभी हाल ही में कल्लाकुरिची में अवैध जहरीली शराब पीने से 57 लोगों की मौत हो चुकी है और बहुत से लोगों की हालत गंभीर बनी हुई है। मद्रास उच्च न्यायालय ने भी राज्य सरकार को इसके लिए कड़ी फटकार लगाई।

गौरतलब है कि पिछले वर्ष भी राज्य में शराब त्रासदी की घटना हुई थी, जिसमें 22 लोगों की मौत हुई थी। लेकिन राज्य सरकार ने उसे अवैध शराब नहीं, बल्कि मेथनॉल बताया था। इस घटना पर अन्नाद्रमुक और भाजपा ने राज्य सरकार को आड़े हाथों लिया है। एमके स्टालिन के नेतृत्व में द्रमुक सरकार के खराब प्रदर्शन के कारण जयललिता की मौत के बाद अन्नाद्रमुक के मरणासन्न अलग-अलग गुटों को जीवनदान मिल रहा है।

दक्षिण भारत से 130 सांसद चुनकर लोकसभा में पहुंचते हैं, उनमें से अधिकांश सांसदों को लगता है कि मोदी सरकार उत्तर भारतीयों के लिए है। इस तरह का नैरेटिव (आख्यान) कई नेताओं द्वारा प्रभावी ढंग से प्रचारित किया जा रहा है, जो कि लोकतंत्र के लिए खतरनाक है।

आग में घी डालने का काम करते हुए तमिलनाडु की द्रमुक सरकार ने जस्टिस चंद्रू की अध्यक्षता में एक उच्चाधिकार प्राप्त कमेटी गठित की, जिसने राज्य के स्कूलों में दूरगामी सुधारों की सिफारिश की। मोदी के नेतृत्व वाले हिंदुत्व के विकास को रोकने के लिए युवाओं के मन में बदले की भावना के साथ द्रविड़ विचारधारा को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिससे तमिलनाडु में सामाजिक विभाजन चरम पर है। चंद्रू समिति ने सिफारिश की कि तमिलनाडु सरकार जातिगत भेदभाव खत्म करने के लिए स्कूलों में छात्रों को उनकी जातीय पहचान बताने वाले रंगीन कलाई बैंड या अंगूठी पहनने तथा माथे पर तिलक लगाने से रोके। कमेटी ने स्कूलों के नामों में से जातिसूचक शब्द हटाने की भी सिफारिश की है। इसमें कहा गया है कि माथे से तिलक हटाओ, कुंकुम चंदन नहीं। स्कूली छात्रों को अपने लंबे बालों को गुच्छे की तरह बांधना चाहिए।

न्यायमूर्ति चंद्रू की रिपोर्ट में कई महत्वपूर्ण सिफारिशें हैं। हालांकि इस बीच सामाजिक कार्यकर्ताओं का कहना है कि समाज में बदलाव की जरूरत है। उदाहरण के लिए, स्कूलों के नाम से जाति उपसर्ग जैसे 'कल्लर रिक्लेमेशन' और 'आदि द्रविड़ वेलफेयर' को हटाने और उन्हें सरकारी स्कूल बताने की सिफारिश महत्वपूर्ण है। लेकिन केवल नाम बदलने से वास्तविकता नहीं बदल जाएगी।

द्रमुक ने 2021 में काफी चुनावी वादा किया था, लेकिन सरकार के स्तर पर उन्हें लागू करने का कोई संकेत नहीं दिख रहा है। कांग्रेस पार्टी की कर्नाटक एवं तेलंगाना में सरकार है, इसके बावजूद भाजपा ने कांग्रेस को वहां बुरी तरह से पराजित किया।

आंध्र प्रदेश में तेलुगु देशम पार्टी ने 95 प्रतिशत सीटों के साथ विधानसभा में जीत हासिल की। भाजपा वहां तेदेपा और पवन कल्याण की जनकल्याण सेना के साथ गठबंधन में थी। तमिलनाडु में भाजपा ने अपना वोट शेयर बढ़ाया, लेकिन लोकसभा में एक भी सीट हासिल करने में विफल रही।

जगन रेड्डी का कहना है कि तेदेपा आंध्र प्रदेश में उनके पार्टी कार्यालयों और निजी आवासों को ध्वस्त करके वाईएसआर कांग्रेस से राजनीतिक बदला ले रही है।

जाहिर है, भाजपा को उसकी 'लुक साउथ पॉलिसी' से फायदा मिला है। केरल में पहली बार भाजपा का एक सांसद चुना गया है। लाल दुर्ग में भगवा ने सेंध लगा दी है। संभवतः इसी कारण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ 2024 के लोकसभा चुनाव में हिंदुत्व की हार की समीक्षा करने के लिए केरल के पलक्कड़ में बैठक बुला रहा है।

अगर हम विश्लेषण करें, तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, अमित शाह, योगी आदित्यनाथ, राजनाथ सिंह दक्षिण में लोकप्रिय चेहरे हैं। इसी तरह राहुल गांधी, प्रियंका गांधी और अखिलेश यादव को भी लोग अच्छी तरह जानते हैं। यही वजह है कि प्रियंका गांधी ने वायनाड लोकसभा को चुना। और इसमें कोई संदेह नहीं है कि अल्पसंख्यकों के वर्चस्व वाली आबादी के कारण प्रियंका गांधी वहां आसानी से जीत भी जाएंगी।

कर्नाटक की कांग्रेस सरकार ने खुलेआम अपने राज्य के लिए अलग झंडा और राष्ट्र गान 'जन गण मन' को दरकिनार करके राज्य गान घोषित कर दिया है। दक्षिण में जो कुछ भी हो रहा है, वह गंभीर अध्ययन का विषय है। लेकिन सुधार का कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। ऐसे में डर है कि कहीं अलगाववादी मानसिकता सिर न उठा ले। लोकसभा चुनाव अभियान के दौरान दक्षिण भारतीय नेताओं के भाषणों का विश्लेषण करने पर ऐसा लगता है कि अलग दक्षिण आवाज के पीछे कुछ विदेशी शक्तियां हैं।

राष्ट्रीय सुरक्षा एजेंसियों को इस उभार पर विचार करना चाहिए और इसका गंभीरता से अध्ययन करना चाहिए, अन्यथा राष्ट्र विरोधी ताकतें हावी हो जाएंगी। ऐसी स्थिति राष्ट्रवाद के लिए गंभीर खतरे की चेतावनी है। दक्षिण भारत के छह राज्यों की कहानी से यही सीख मिलती है। अब देखना होगा कि क्या मोदी सरकार इस तरह की मानसिकता को कुचलने के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति रखती है!

edit@amarujala.com

जीवन धारा

ओ हेनरी

सच्चा इन्सान ही प्यार की कीमत समझ सकता है। प्रत्येक इन्सान को दिन भर का काम निपटाने के बाद अपने आदर्श की तलाश करनी चाहिए, जो प्यार या किताबों की अलमारी में छिपी मधुर खामोशी हो सकती है।

प्यार में वस्तुओं का नहीं भावनाओं का मूल्य होता है

इन्सान का जीवन सिसकियों, सूंघने की शक्ति और मुस्कराहटों से बना होता है। इनमें सूंघने की शक्ति महत्वपूर्ण होती है। सूंघने का मतलब यहां किसी गंध या खुशबू को सूंघने से नहीं निकालना चाहिए। सूंघना का मतलब है कि हम किसी के जज्बात को कितना महसूस कर सकते हैं। दूसरों की भावनाओं की कद्र या समझ ही सूंघने की सबसे बड़ी शक्ति है। दूसरों के जज्बात को तभी समझा जा सकता है, जब आप किसी से प्यार करते हैं। यह प्यार इतना आसान भी नहीं है। यह 'थ्री शेल गेम' से ज्यादा पेचीदा और दोगुना फिसलन भरा होता है।

लोग अक्सर प्यार की बातें करते हैं, इसके बारे में पूछते हैं, जैसे यह कोई जादुई अमृत हो, जिसे आप सड़क किनारे खड़े होकर बेच सकते हैं। प्यार बड़ी गहरी चीज है। इसे कहीं से खरीदा नहीं जा सकता। जालसाज, ठग और बदकिस्मत लोग भी प्यार हासिल नहीं कर सकते। एक सच्चा इन्सान ही प्यार की कीमत समझ सकता है। इसे पाने के लिए लंबी साधना की जरूरत है। प्रत्येक इन्सान को दिन भर के काम के बाद अपने आदर्श की तलाश करनी चाहिए, जो प्यार या किताबों की अलमारी में छिपी मधुर खामोशी हो सकती है। प्यार और दोस्ती में भी ज्यादा अंतर नहीं है। हम जिनसे प्यार और दोस्ती करते हैं, वे हमसे धन-संपत्ति नहीं, बल्कि समर्पण चाहते हैं। पैसे से तो हम अपने लिए एक मिनट तक नहीं खरीद सकते। यदि ऐसा होता, तो अमीर लोग ही सबसे ज्यादा समय तक जीवित रहते। प्यार को दो कहानियों, 'द गिफ्ट ऑफ द मैगी' और 'ए सर्विस ऑफ लव' के जरिये आसानी से समझा जा सकता है। दोनों ही कहानियां युवा दंपतियों की हैं। दोनों के पास आर्थिक रूप से गरीब हैं, लेकिन प्यार के मामले में बहुत अमीर हैं। 'द गिफ्ट ऑफ द मैगी' में क्रिसमस के दिन पति-पत्नी एक-दूसरे को उपहार देना चाहते हैं, लेकिन समस्या यह है कि उनके पर्याप्त पास पैसे नहीं हैं। दोनों बाजार में जाते हैं। पत्नी ने पति की घड़ी की चेन के लिए अपने बाल बेच दिए। दूसरी ओर, पति को ख्याल आता है कि उसकी पत्नी के बाल बहुत अच्छे हैं, लेकिन उन्हें संवारने के लिए अच्छा कंघा नहीं है। पति उसके लिए कंघा खरीदने की खातिर अपनी घड़ी बेच देता है। दोनों ही जब घर पहुंचते हैं और एक-दूसरे को उपहार देते हैं, तो देखते हैं कि जिसके लिए उन्होंने उपहार खरीदे थे, वे अब किसी काम के नहीं, क्योंकि पत्नी के जब तक नए बाल नहीं आएंगे, तब तक पति के उपहार में दिए उस कंघे का कोई महत्व नहीं। दूसरी ओर, पत्नी जो चेन पति की घड़ी के लिए लाई थी, वह उस घड़ी को बेचकर कंघा ले आया था। भले ही वे उपहार उन दोनों के किसी काम नहीं आए, लेकिन उनके अंदर एक-दूसरे के प्रति जो भाव थे, उससे उनकी आंखों में आंसू आ गए। इसलिए प्यार में वस्तुओं का नहीं, भावनाओं का मोल होता है।

प्यार की खातिर

सूत्र

दूसरी कहानी 'ए सर्विस ऑफ लव' में चित्रकार पति कहता है कि मैं अपनी चित्रकारी से तुम्हारी पढ़ाई के लिए पैसे कमाऊंगा। वहीं, पियानोवादक पत्नी कहती है कि वह ट्यूशन पढ़ाकर उसकी मदद करेगी। दोनों ही गुप्त रूप से एक लॉन्ड्री में काम करते हैं। बाद में उन्हें पता चलता है कि वे एक-दूसरे की मदद के लिए झूठ बोलकर कोई दूसरा काम कर रहे थे। लेकिन यह सब उन्होंने अपने प्यार की खातिर किया।

दूसरा पहलू

डॉ. फेडरेंको और उनके सहयोगी वैज्ञानिकों के शोध के अनुसार भाषा की जरूरत हमें विचार के बजाय संवाद के लिए होती है।

शब्द संवाद के लिए होते हैं सोचने के लिए नहीं

हजारों वर्षों से दार्शनिक भाषा के उद्देश्य के बारे में बहस करते रहे हैं। प्लेटो का मानना था कि सोचने के लिए भाषा जरूरी है। उन्होंने लिखा कि विचार आत्मा का खुद से एक मौन आंतरिक संवाद है। 1960 के दशक की शुरुआत में भाषाविद नोम चोम्स्की ने तर्क दिया कि हम तर्क और अन्य प्रकार के विचारों के लिए भाषा का उपयोग करते हैं। उन्होंने लिखा, 'यदि भाषा की गंभीर कमी है, तो विचार की भी गंभीर कमी होगी।'

स्नातक की छात्रा एवेलिना फेडोरेंको ने क्लास में डॉ. चोम्स्की को अपने सिद्धांत की व्याख्या करते सुना। उन्हें वह विचार पसंद था, लेकिन इसके पक्ष में सबूत नहीं होने से वह हैरान थीं। उन्होंने कहा, वह जो कुछ भी कह रहे थे, वह ऐसे कहा गया, जैसे वे तथ्य या सत्य हों। डॉ. फेडोरेंको बाद में एमआईटी में तंत्रिका वैज्ञानिक बनीं। उन्होंने मस्तिष्क स्कैनिंग का उपयोग करके यह पता लगाने की कोशिश की कि मस्तिष्क कैसे भाषा निर्मित करता है। और 15 वर्षों के शोध ने उन्हें एक चौंकाने वाले निष्कर्ष पर पहुंचाया कि सोचने के लिए हमें भाषा की जरूरत नहीं है। वह कहती हैं, 'जब आप इसका मूल्यांकन करना शुरू करते हैं, तो आपको चिंतन में भाषा की भूमिका का सबूत नहीं मिलता है।'

कार्ल जिमर

डॉ. फेडोरेंको ने मस्तिष्क स्कैनिंग का उपयोग करके यह पता लगाने की कोशिश की कि मस्तिष्क कैसे भाषा निर्मित करता है। इसके लिए उन्होंने 15 वर्ष तक शोध किया।

शुरुआती अध्ययनों से पता चला कि मस्तिष्क के जो क्षेत्र भाषा के लिए जरूरी थे, वे तर्क या गणित के सवाल हल करते समय भी सक्रिय रहते हैं। लेकिन डॉ. फेडोरेंको व अन्य शोधकर्ताओं ने पाया कि यह एक मृगतृष्णा थी। फिर डॉ. फेडोरेंको व उनके सहयोगियों ने शक्तिशाली स्कैनर का उपयोग करके मस्तिष्क के कुछ ऐसे क्षेत्र खोजे, जो केवल तभी सक्रिय होते थे, जब स्वयंसेवक भाषा को समझने का कार्य करते थे। शोधकर्ताओं ने अलग-अलग तरह से चिंतन करने वाले लोगों के मस्तिष्क को फिर से स्कैन करके कहा कि जब आप चिंतन कर रहे होते हैं, तो मस्तिष्क के अन्य क्षेत्र वास्तव में कड़ी मेहनत करते हैं, पर भाषा का नेटवर्क शांत रहता है। यदि विचार के लिए भाषा नहीं, तो भाषा की जरूरत क्या है? डॉ. फेडोरेंको एवं सहयोगी कहते हैं कि संवाद के लिए। डॉ. चोम्स्की और अन्य ने शब्दों की असापटता और हमारे अंतर्ज्ञान को जोर से व्यक्त करने में कठिनाई का हवाला देते हुए इसे खारिज कर दिया है। व्यापक अध्ययनों से पता चला है कि सूचना को कुशलतापूर्वक स्थानांतरित करने के लिए भाषाओं को तैयार किया गया है। एक अध्ययन में पाया कि अक्सर इस्तेमाल किए जाने वाले शब्द छोटे होते हैं, जिससे भाषा सीखना आसान हो जाता है और सूचना का प्रवाह तेज हो जाता है।

शोधकर्ताओं ने अलग-अलग तरह से चिंतन करने वाले लोगों के मस्तिष्क को स्कैन करके कहा कि जब आप चिंतन कर रहे होते हैं, तो मस्तिष्क के अन्य क्षेत्र वास्तव में कड़ी मेहनत करते हैं, लेकिन भाषा का नेटवर्क शांत रहता है।

©The New York Times 2024

आंकड़े

ईवी व एचवी की मांग

यह पर्यावरण के लिए अच्छा है कि देश में लोगों का रुझान अब इलेक्ट्रिक व्हीकल (ईवी) और हाइब्रिड व्हीकल (एचवी) की ओर बढ़ रहा है।

*जून वर्ष 2024 की जून तक के आंकड़े।
स्रोत : RBI, VAAHAN Dashboard

याज्ञवल्क्य ने पत्नियों से कहा कि संपत्ति को लेकर विवाद न हो, इसलिए आप दोनों बराबर बांट लें, पर मैत्रेयी ने कहा-मुझे तो ब्रह्मज्ञान चाहिए।

मैत्रेयी को मिला ब्रह्मज्ञान

अंतर्यात्रा
संकलित

महर्षि याज्ञवल्क्य की दो पत्नियां थीं। एक महर्षि भरद्वाज की पुत्री कात्यायनी और दूसरी मित्र ऋषि की कन्या मैत्रेयी। बताया जाता है कि मैत्रेयी को अपने पति से ही ब्रह्मज्ञान प्राप्त हुआ था। एक बार की बात है, जब याज्ञवल्क्य संन्यास लेने लगे, तो उन्होंने अपनी दोनों ही पत्नियों को बुलाया और कहा कि मैं अब संन्यास लेना चाहता हूं। अतः मेरी जो भी संपत्ति है, उसे तुम दोनों में बराबर बांट दूं, जिससे बाद में झगड़ा न हो। इस विषय में तुम दोनों की क्या सम्मति है, वह कहो।

याज्ञवल्क्य की बात सुनकर कात्यायनी चुप रहीं, लेकिन मैत्रेयी ने कहा कि भगवन! इस नश्वर संपत्ति को लेकर हम क्या करेंगे? यह तो क्षणिक है, दूसरे क्षण में नाश होने वाली है। हमें तो आप वह संपत्ति दें, जिसके कारण आप वास्तव में संपत्तिवान समझे जाते हैं।

याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को समझाया कि धन-संपत्ति के बिना असुविधा होती है, लेकिन मैत्रेयी ने कहा कि भगवन! सांसारिक सुखों का मूल्य ही क्या है? नाशवान वस्तु के भरण-पोषण में इतनी चिंता क्यों? मुझे तो वह ज्ञान दीजिए, जिससे ये सब प्रपंच ही विलीन हो जाएं। मैत्रेयी की बातें सुनकर याज्ञवल्क्य अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा कि देवी तुम मुझे पहले से ही प्रिय थीं, लेकिन आज तुम्हारी ये बातें सुनकर मैं अधिक प्रसन्न हुआ। आज तुमने मुझे खरीद लिया। उन्होंने कहा कि सच्ची संपत्ति, तो ब्रह्मज्ञान ही है। इसके बाद महर्षि याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 01 जनवरी, 1953

तमाम अरब देशों का एक संघ बनेगा

मिश्र को योजना मंजूर
मध्यपूर्व की राजनीति में एक और करवट

मिस्र और सीरिया आपस में मिलकर अपना एक संघ बना रहे हैं। इस योजना को दोनों देशों की सरकारों ने स्वीकार कर लिया है। एक सीरियाई पत्र का कथन है कि शीघ्र ही सारे अरब देश आपस में मिलकर अपना एक संघ बना लेंगे।

भारत की बढ़ती आर्थिक साख

विभिन्न देशों की सॉवरेन क्रेडिट रेटिंग का आकलन करने वाले संस्थान भारत की आर्थिक प्रगति को लेकर बहुत उत्साहित हैं।

प्रह्लाद सबनानी — अर्थव्यवस्था

वैश्विक क्रेडिट रेटिंग एजेंसी स्टैंडर्ड ऐंड पूअर ने हाल ही में भारतीय अर्थव्यवस्था के संबंध में अपने दृष्टिकोण को सकारात्मक करते हुए कहा है कि वह भारत की सॉवरेन क्रेडिट रेटिंग को अपग्रेड करने के लिए आर्थिक विकास के विभिन्न पैमानों का व राजकोषीय घाटे से संबंधित आंकड़ों का अध्ययन एवं विश्लेषण कर रही है। यदि दोनों क्षेत्रों में सुधार होता है, तो भारत की सॉवरेन क्रेडिट रेटिंग को अपग्रेड किया जा सकता है। वर्तमान में भारत की सॉवरेन क्रेडिट रेटिंग BBB- है, जो निवेश के लिए सबसे कम रेटिंग की श्रेणी में आती है।

किसी भी देश की सॉवरेन क्रेडिट रेटिंग अपग्रेड होने पर उस देश में विदेशी निवेश बढ़ने लगता है, क्योंकि निवेशकों को इन देशों में पूंजी निवेश तुलनात्मक रूप से सुरक्षित लगता है। साथ ही, ऐसे देशों की कंपनियों के लिए अन्य देशों में पूंजी उगाहना न केवल आसान होता है, बल्कि ऋण पर भी कम ब्याज राशि देनी पड़ती है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र में नई सरकार का गठन हो चुका है। केंद्र सरकार द्वारा पिछले दस वर्षों के दौरान लिए गए आर्थिक निर्णयों का भरपूर लाभ देश को मिला है। भारत आज विश्व में सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था बन गया है। देश में बड़े स्तर पर वित्तीय समावेशन हुआ है। जनधन योजना के अंतर्गत 50 करोड़ से अधिक बैंक बचत खाते खोले जा चुके हैं, जिनमें करीब 2.50 लाख करोड़ रुपये की राशि जमा है। राजगार के नए अवसर पैदा हुए हैं। देश में प्रति व्यक्ति आय भी बढ़कर लगभग 2200 अमेरिकी डॉलर प्रतिवर्ष तक पहुंच गई है। कुछ राज्यों में किसानों की आय दोगुने से भी अधिक हो गई है। भारत में विदेशी निवेश भी भारी मात्रा में होने लगा है एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत में अपनी विनिर्माण इकाइयां स्थापित करने लगी हैं। भारत में आर्थिक विकास की दर वित्तीय वर्ष 2023-24 में आठ प्रतिशत से भी अधिक रही है।

भारत, अपने आर्थिक विकास की गति को और तेज करने के लिए आधारभूत ढांचे को विकसित करने के लगातार प्रयास कर रहा है। आधारभूत ढांचे के विकास से उत्पादकता में सुधार हुआ है एवं उत्पादन लागत में कमी आई है। एस ऐंड पी का तो यह भी कहना है कि भारत जिस प्रकार की आर्थिक नीतियों को लागू करते हुए आगे बढ़ रहा है, उससे भारत की आर्थिक विकास दर को लंबे समय तक आठ प्रतिशत से ऊपर बनाए रखा जा सकता है। भारत ने अपने राजकोषीय घाटे पर भी नियंत्रण स्थापित कर लिया है। वित्तीय वर्ष 2022-23 में भारत का राजकोषीय घाटा 17 लाख 74 हजार करोड़ रुपये था, जो वित्तीय वर्ष 2023-24 में घटकर 16 लाख 54 हजार करोड़ रुपये का रह गया है। अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी जैसे विकसित देश भी अपने राजकोषीय घाटे को कम नहीं कर पा रहे हैं, परंतु भारत ने वर्ष 2023-24 के दौरान यह बड़ी सफलता हासिल की है। केंद्र सरकार ने खर्च पर नियंत्रण किया है एवं अपनी आय के साधनों में अधिक वृद्धि की है। भारत के कुछ राज्यों (पंजाब, पश्चिम बंगाल, केरल आदि) में राजकोषीय घाटे को लेकर चिंता जताई जा रही है, परंतु केंद्र सरकार एवं कुछ अन्य राज्य (उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडु आदि) अपने राजकोषीय घाटे को सफलतापूर्वक नियंत्रित कर पा रहे हैं।

राजकोषीय घाटे को कम करने में भारत को इसलिए भी सफलता मिली है कि देश में 20 से अधिक करों को मिलाकर केवल एक कर प्रणाली, वस्तु एवं सेवा कर प्रणाली (जीएसटी) को लागू किया गया है। आज जीएसटी से भारत को औसत 1.75 लाख करोड़ रुपये की राशि प्रतिमाह अप्रत्यक्ष कर के रूप में प्राप्त हो रही है। प्रत्यक्ष कर के संग्रहण में भी 20 प्रतिशत की वृद्धि दिखी है। कुल मिलाकर, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न देशों की सॉवरेन क्रेडिट रेटिंग का आकलन करने वाले विभिन्न संस्थान भारत की आर्थिक प्रगति को लेकर बहुत उत्साहित हैं एवं उसे अपग्रेड करने पर गंभीरता से विचार करते हुए दिखाई दे रहे हैं। स्टैंडर्ड ऐंड पूअर ने तो घोषणा भी कर दी है कि आगे आने वाले दो वर्षों तक वह भारत की आर्थिक प्रगति, आधारभूत ढांचे को विकसित करने एवं राजकोषीय घाटे को कम करने संबंधी प्रयासों का विवेचन करेगा। बहुत संभव है कि वह आगामी दो वर्षों में भारत की सॉवरेन क्रेडिट रेटिंग को अपग्रेड कर दे।